तत्त्वार्थसूत्रम्

Tattvārthasūtram

षष्ठोऽध्यायः

Sixth Chapter

तत्त्वार्थसूत्र
षष्ठ अध्याय

आस्रव तत्त्व का चित्राङ्कन इसमें किया गया है। चित्र के मध्य में मानवाकृति की पृष्ठभूमि में मन, वचन, काय के तीन द्वार रूप आस्रव के निमित्त को दिखाया है।

मानवाकृति के दायें-बायें जीवाधिकरण के भेदों का अङ्कन है।

बायें भाग में संरम्भ, समारम्भ, आरम्भ तथा दायें भाग में कृत, कारित, अनुमोदना को दिखाया है।

चित्र के ऊपरी भाग में दायें व मध्य भाग में साता वेदनीय, शुभ आस्रव व बायें भाग में असाता वेदनीय, अशुभ आस्रव को दिखाया है।

सम्पूर्ण चित्र में आस्रव तत्त्व को पानी की लहरों के रूप में प्रतिबिम्बित किया गया है।

तत्त्वार्थसूत्रम्
Tattvārthasūtram

षष्ठोऽध्यायः
Sixth Chapter

आस्रव-कथन
Influx of Karmas

कायवाङ्मनःकर्म योगः ।।१।।

(काय-वाङ्-मनः-कर्म योगः।)

Kāyavāṅmanaḥkarma Yogaḥ.(1)

शब्दार्थ : **कायवाङ्मनःकर्म** - काय, वचन और मन की क्रिया; **योगः** - योग (है)।

Meaning of Words : **Kāyavāṅmanaḥkarma** - activities of body, speech and mind; **Yogaḥ** - **(is)** Yoga.

सूत्रार्थ : काय, वचन और मन की क्रिया (जिससे आत्मप्रदेशों में स्पन्दन हो), योग है।

English Rendering : The activity of the body, the speech and the mind **(**causing vibration in space-points of soul**)** is termed as Yoga.

टीका : काय, वचन और मन की क्रिया से आत्मप्रदेशों में जो परिस्पन्दन होता है, उसे योग कहते हैं। अथवा काय, वचन और मन की प्रवृत्ति के लिये जीव का प्रयत्न विशेष ही योग कहलाता है। योग तीन प्रकार का है - काय-योग, वचन-योग और मनो-योग।

काय-योग के सात भेद हैं - औदारिक, औदारिक मिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिक मिश्र, आहारक, आहारक मिश्र तथा कार्मण काय-योग।

वचन योग चार प्रकार के होते हैं - सत्य वचन-योग, असत्य वचन-योग, सत्यासत्य (उभय) वचन-योग एवं अनुभय वचन-योग।

मनोयोग भी चार प्रकार के होते हैं - सत्य मनोयोग, असत्य मनोयोग, सत्यासत्य (उभय) मनोयोग तथा अनुभय मनोयोग।

इस प्रकार योग के पन्द्रह उत्तरभेद हैं।

वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम और शरीर नामकर्म के उदय से औदारिक आदि सात प्रकार की काय वर्गणाओं में से किसी एक के आलम्बन से आत्मा के प्रदेशों में जो परिस्पन्दन होता है, उसे काय योग कहते हैं। शरीर नामकर्म के उदय से वचन वर्गणाओं के आलम्बन होने पर और वीर्यान्तराय और मतिज्ञानावरण और अक्षर-श्रुत ज्ञानावरण के क्षयोपशम से अन्तरङ्ग वचन के बोलने की शक्ति से वचन रूप पर्याय के सम्मुख जो आत्मप्रदेश परिस्पन्दन होता है, वह वचन-योग है। अभ्यन्तर वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम और नो-इन्द्रियावरण के क्षयोपशम रूप मनोलब्धि के प्राप्त होने पर और बाह्य कारण रूप मनोवर्गणाओं के अवलम्बन से मन रूप पर्याय के सम्मुख हुए आत्मा के प्रदेशों में जो स्पन्दन होता है, वह मनोयोग है।

यहाँ यह भी जानना अभीष्ट है कि सयोगकेवली गुणस्थान में केवली भगवान् के समस्त ज्ञानावरण और वीर्यान्तराय कर्म का क्षय होने पर भी तीन प्रकार की वर्गणाओं की अपेक्षा योग होता है।

Comments : Vibration in space-points of the soul as a result of the activities of the body, the speech and the mind is known as 'Yoga'. Or the special effort made by soul for a particular activity of mind, speech and body is known as 'Yoga'. Yoga is of three kinds - physical, vocal and mental.

'Kāya Yoga' (i.e. physical Yoga) is of seven kinds - Audārika (vibration in the space-points of the soul due to activity of the gross body); 'Audārika Miśra' (i.e. vibration in the space-points of the soul due to kārmic aid and during completion of gross body); 'Vaikriyika' (vibration in the space-points of the soul due to activity of transformable body of celestial beings & hellish beings); 'Vaikriyika Miśra' (i.e. vibration in the space-points of the soul due to kārmic aid during completion of transformable body); 'Āhāraka' (i.e. vibration in the space-points of the soul due to

activity of translocational body); 'Āhāraka Miśra' (i.e. vibration in the space-points of the soul due to kārmic aid during formation of translocational body) and 'Kārmaṇa Kāya Yoga' (i.e. kārmic body activity).

'Vacana Yoga' or vocal Yoga is of four kinds - 'Satya Vacana Yoga' (i.e. vibration in space-points of the soul due to true speech), 'Asatya Vacana Yoga' (i.e. vibration in space-points of the soul due to untrue speech). 'Satyāsatya Vacana Yoga' (i.e. vibration in space-points of the soul due to mixture of true & untrue speech) and 'Anubhaya Vacana-Yoga' (i.e. vibration in the space-points of the soul due to neutral i.e. neither true nor untrue speech).

Similarly 'Manoyoga' is also of four kinds - 'Satya Manoyoga', 'Asatya Manoyoga', 'Satyāsatya Manoyoga' and 'Anubhaya Manoyoga'; thus there are fifteen sub-divisions of 'Yoga'.

Body activity or 'Kāya Yoga' is the vibration set in the space-points of the soul by the molecules of one of the seven kinds of bodies - Audārika etc., consequent on destruction-cum-subsidence of energy obstructive karma and rise of physique making karma. Speech activity in the vibration in the space-points of the soul on the threshold of manifestation of internal power of speech consequent on the activity of the molecules composing the organ of speech on rise of physique making karma and destruction-cum-subsidence of energy obstructing karma, sensory knowledge obstructing karma and scriptural obstructing karma in the form of words etc. Thought activity or 'Manoyoga' is the vibration in the space-points of the soul on the threshold of origination of mental thinking consequent on the activity of the molecules composing the mind as a result of destruction-cum-subsidence of energy obstructing karma as internal cause and support of the molecules composing the mind as an external cause.

It is important to know that in the thirteenth stage of spiritual development i.e. embodied omniscient, there are three kinds of activities in the form of vibration of soul i.e. Yoga, even after total annihilation of knowledge obscuring karmas and energy obscuring kārmas.

आस्रव का लक्षण
Characteristics of Influx

स आस्रवः ।।२।।

(सः आस्रवः।)

Sa Āsravaḥ.(2)

शब्दार्थ : **सः** – वह; **आस्रवः** – आस्रव (है)।

Meaning of Words : **Saḥ** - that; **Āsravaḥ** - (is) influx (of karmas).

सूत्रार्थ : वही यानी तीनों प्रकार का योग ही आस्रव है।

English Rendering : That (i.e. Yoga of three kinds) is (the cause of) influx (of karmas).

टीका : आत्म प्रदेशों का परिस्पन्दन योग है, यह पहले सूत्र में कहा गया है। उस परिस्पन्दन से कर्म योग्य पुद्गल परमाणु कर्म-वर्गणाओं में परिवर्तित होकर आत्मप्रदेशों में आकर मिल जाते हैं, वही आस्रव है। कर्म-पुद्गल परमाणु सर्वत्र आत्मप्रदेशों के पास रहते हैं। वे कहीं बाहर से नहीं आते हैं। अतः आस्रव से आशय उन कर्म-वर्गणाओं का आत्मप्रदेशों में मिलना यानी एकमेक हो जाना है, उनका आना नहीं।

Comments : It has been stated under the comments of Sūtra one that vibrational activity in space-points of soul is 'Yoga'. As a consequence of such vibration, appropriate molecules of matter particles get converted into kārmic molecules and inter-mingle into the space-points of the soul. This process is termed as Āsrava or influx of karmas. Kārmic matter particles are present everywhere surrounding the space-points of the soul. They do not flow into the soul from anywhere outside. As such influx means intermingling of kārmic particles with the space-points of the soul and not their inflowing from outside.

शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ।।३।।

(शुभः पुण्यस्य अशुभः पापस्य।)

Śubhaḥ Puṇyasyāśubhaḥ Pāpasya.(3)

शब्दार्थ : **शुभः** – शुभ (योग); **पुण्यस्य** – पुण्य का (आस्रव है)। **अशुभः** – अशुभ (योग); **पापस्य** – पाप का (आस्रव है)।

Meaning of Words : **Śubhaḥ** - auspicious **(**Yoga**)**; **Puṇyasya** - **(**influx of**)** merit; **Aśubhaḥ** - inauspicious **(**Yoga**)**; **Pāpasya** - **(**influx of**)** demerit.

सूत्रार्थ : शुभ योग पुण्य का और अशुभ योग पाप का आस्रव है।

English Rendering : Auspicious Yoga is the cause of influx of merit **(**karmas**)** and inauspicious Yoga is the cause of influx of demerit **(**karmas**)**.

टीका : शुभ योग पुण्य कर्म के आस्रव का और अशुभ योग पाप कर्म के आस्रव का कारण होता है। जो आत्मा को पवित्र करे या जिससे आत्मा पवित्र होता है, वह पुण्य है। जो आत्मा को शुभ की ओर न जाने दे, वह पाप है। साता वेदनीय, शुभ आयु, शुभ नाम और शुभ गोत्र पुण्य हैं तथा असाता वेदनीय, अशुभ आयु, अशुभ नाम और अशुभ गोत्र पाप हैं। जीव रक्षा, अचौर्य, ब्रह्मचर्य आदिक शुभ काय योग है। सत्य, हित-मित-प्रिय वचन बोलना शुभ वचन योग है। अर्हन्त आदि की भक्ति, तप में रुचि, शास्त्र की विनय आदि शुभ मनोयोग है। इसके विपरीत शरीर की क्रियाएँ, विपरीत वचन बोलना और अशुभ चिन्तन क्रम से अशुभ काय योग, अशुभ वचन योग और अशुभ मनोयोग है।

शुभ परिणामों से उत्पन्न योग को शुभ योग और अशुभ परिणामों से उत्पन्न योग को अशुभ योग कहते हैं। ऐसा नहीं है कि जिसका हेतु शुभ कर्म हो, वह शुभ योग और जिसका हेतु अशुभ कर्म हो, वह अशुभ योग है। यह स्मरण रखना चाहिए कि स्व और पर में उत्पन्न होने वाले सुख या दुःख यदि विशुद्धिपूर्वक हैं तो पुण्यास्रव होगा, यदि संक्लेशपूर्वक हैं तो पापास्रव होगा। यही व्यवस्था पुण्य-पाप आस्रव की है।

Comments : Auspicious Yoga is the cause of influx of merit karmas and inauspicious Yoga of the demerit karmas. The activity which purifies the soul or by which the soul is purified is merit (i.e. Puṇya). The activity which prevents the soul from good is demerit (i.e. Pāpa). Pleasure feelings, auspicious age i.e. life course, auspicious Nāmakarma and auspicious clan are all merit and painful feelings, inauspicious age, inauspicious Nāmakarma and inauspicious clan are all demerit. Providing protection to all living beings, non-stealing, celibacy etc. are auspicious Kāya Yoga. Speaking truth, sweet, to the point and for the welfare of all are auspicious Vacana Yoga. Devotion to the omniscient etc., interest in penance, reverence for the scriptures etc. are auspicious Manoyoga. Opposite to these activities of body, speech and mind are termed respectively as inauspicious Kāya Yoga, inauspicious Vacana Yoga and inauspicious Manoyoga.

The activity performed with good intentions is termed as auspicious Yoga and that which is performed with evil intentions is termed as inauspicious Yoga. does not mean that the activity performed yielding good results is auspicious Yoga and that which yields evil results is inauspicious. It is to be remembered that manifestation of pleasure or pain in one-self or others by activities performed with pure intentions would result in influx of merit karmas and if activities are performed with painful thoughts would result in influx of demerit ones. This is the rule for influx of merit & demerit.

आस्रव के फल में विशेषता
Special Features of Influx

सकषायाकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः।।४।।

(सकषाय-अकषाययोः साम्परायिक-ईर्यापथयोः।)

Sakaṣāyākaṣāyayoḥ Sāmparāyikeryāpathayoḥ.(4)

शब्दार्थ : **सकषायाकषाययोः** – कषाय सहित और कषाय रहित (जीवों का); **साम्परायिकेर्यापथयोः** – साम्परायिक और ईर्यापथ (कर्मों का क्रमशः आस्रव होता है)।

Meaning of Words : **Sakaṣāyākaṣāyayoḥ** - (of souls) with passions and without passions; **Sāmparāyikeryāpathayoḥ** - Sāmparāyika and Īryāpatha (influx of karmas respectively).

सूत्रार्थ : कषाय सहित और कषाय रहित जीवों का योग क्रमशः साम्परायिक और ईर्यापथ आस्रव रूप होता है।

English Rendering : Yoga of the Jīvas with passions and without passions is Sāmparāyika and Īryāpatha form of influx (of karmas) respectively.

टीका : आत्मा में होने वाली क्रोध आदि रूप कलुषता को 'कषाय' कहते हैं। कर्मास्रव में योग प्रकृति और प्रदेश तथा कषाय स्थिति और अनुभाग के लिए कारण होते हैं। यहाँ कर्मास्रव की अपेक्षा से संसारी जीवों को दो भागों में विभक्त किया गया है – कषाय सहित (पहले गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक के जीव) और कषाय रहित (ग्यारहवें, बारहवें और तेरहवें गुणस्थानवर्ती जीव)। कषाय सहित जीवों के आस्रव को 'साम्परायिक आस्रव' कहा जाता है, जो संसार परिभ्रमण का कारण है। कषाय रहित जीवों के आस्रव को 'ईर्यापथ आस्रव' कहते हैं। ईर्यापथ आस्रव में कर्म एक समय में ही निर्जरित हो जाते हैं। ऐसे कर्म सूखी दीवाल पर गिरे हुए रजकण के समान तुरन्त ही निर्जरित हो जाते हैं।

योग तेरहवें गुणस्थान तक ही होता है। अतः चौदहवें गुणस्थान में योग का भी अभाव हो जाता है, इसलिए इस गुणस्थानवर्ती अयोगकेवली जिन को कर्मास्रव नहीं होता।

Comments : The foul feelings rising in the soul actuated by passions like anger etc. are known as Kaṣāya. In case of influx of karmas, the nature and quantity of karmas are caused by 'Yoga', duration and potency of fruition are due to passions. Here the mundane living beings are classified in to two categories in the context of influx of karmas - living beings with passions (all beings

from first stage to tenth stage of spiritual development) and those without passions (dwelling in 11th, 12th and 13th stages of spiritual development). The influx of karmas of living beings with passions is termed as 'Sāmparāyika Āsrava', which is the cause of mundane wandering. Influx of karmas by living beings who have become free from passions is termed as 'Īryāpatha Āsrava'. In this case, the bound karmas get dissociated within one 'Samaya'. Such karma particles get dissociated immediately like sand particles thrown against a dry wall.

Yoga exists only upto thirteenth stage of spiritual development. As such there is no Yoga in the fourteenth stage of spiritual development and therefore there is no influx of karmas in case of Ayoga Kevalī (non-vibratory omniscients) dwelling in this final (i.e. fourteenth) stage of spiritual development.

साम्परायिक आस्रव के कारण
Causes of Sāmparāyika Influx

इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः पञ्चचतुःपञ्चपञ्चविंशतिसंख्याः पूर्वस्य भेदाः।।५।।

(इन्द्रिय-कषाय-अव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुः-पञ्च-पञ्चविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः।)

Indriyakaṣāyāvratakriyāḥ Pañcacatuḥpañcapañca-viṁśatisaṁkhyāḥ Pūrvasya Bhedāḥ.(5)

शब्दार्थ : **इन्द्रियकषायाव्रतक्रियाः** – इन्द्रिय, कषाय, अव्रत और क्रियाएँ; **पञ्चचतुःपञ्चपञ्चविंशतिसंख्याः** – (क्रमशः) पाँच, चार, पाँच और पच्चीस संख्या; **पूर्वस्य भेदाः** – पूर्व (साम्परायिक आस्रव) के भेद हैं।

Meaning of Words : **Indriyakaṣāyāvratakriyāḥ** - sense organs, passions, vow-less-ness and activities; **Pañcacatuḥpañca-pañcaviṁśatisaṁkhyāḥ** - five, four, five, twenty-five in numbers (respectively); **Pūrvasya Bhedāḥ** - (are kinds of) the first type of influx of karmas i.e. Sāmparāyika Āsrava.

सूत्रार्थ : पूर्व अर्थात् साम्परायिक आस्रव के इन्द्रिय, कषाय, अव्रत और क्रियाओं के क्रमशः पाँच, चार, पाँच और पच्चीस भेद हैं।

English Rendering : The first kind of influx (of karmas) i.e. Sāmparāyika Āsrava is caused by five senses, four passions, five vow-less-ness and twenty-five activities.

टीका : जिन कारणों से दसवें गुणस्थान तक के जीवों को साम्परायिक आस्रव होता है, उनका कथन इस सूत्र में किया गया है। पाँच इन्द्रियों के विषय, चार कषाय, पाँच अव्रत और पच्चीस क्रियायें – इस प्रकार कुल उनतालीस भेद आस्रव के कहे गये हैं। स्पर्शन, रसना, घ्राण, चक्षु और श्रोत – इन पाँच इन्द्रियों के विषयों द्वारा, क्रोध, मान, माया और लोभ रूप चार कषायों द्वारा और हिंसा, असत्य, स्तेय, अब्रह्मचर्य और परिग्रह – मूर्च्छा रूप पाँच अव्रतों के द्वारा साम्परायिक आस्रव होता है। पच्चीस क्रियाओं द्वारा भी साम्परायिक आस्रव होता है। वे क्रियाएँ निम्न प्रकार हैं –

१. सम्यक्त्व क्रिया – सम्यक्त्व को बढ़ाने वाली क्रियायें, जैसे – देव पूजन, गुरूपास्ति, शास्त्र स्वाध्याय आदि;

२. मिथ्यात्व क्रिया – मिथ्यात्व कर्म के उदय से मिथ्यात्व को बढ़ाने वाली क्रियायें, जैसे – कुदेव पूजन, कुगुरु के प्रति श्रद्धा होना, ऐसे शास्त्रों का अध्ययन जिनमें हिंसा को पुण्य का कारण कहा गया हो;

३. प्रयोग क्रिया – शरीर आदि द्वारा गमनागमन आदि रूप प्रवृत्ति;

४. समादान क्रिया – संयत का अविरति के सम्मुख होना;

५. ईर्यापथ क्रिया – ईर्यापथ रूप गमन की कारणभूत क्रिया;

६. प्रादोषिकी क्रिया – क्रोध के आवेश से क्रिया होना;

७. कायिकी क्रिया – दुष्ट भाव युक्त होकर उद्यम करना;

८. आधिकरणिकी क्रिया – हिंसा के साधनों को ग्रहण करना;

९. पारितापिकी क्रिया – वे क्रियायें जो दुःख की उत्पत्ति के लिए कारण हों;

१०. प्राणातिपातिकी क्रिया – आयु, इन्द्रिय, बल, श्वासोच्छ्वास रूप प्राणों का वियोग करने रूप क्रिया;

११. दर्शन क्रिया – रागवश प्रमादी जीव का रमणीय रूप देखने का अभिप्राय रूप क्रिया;

१२. स्पर्शन क्रिया – प्रमादवश स्पर्श करने लायक सचेतन पदार्थ का अनुबन्ध स्पर्शन क्रिया;

१३. प्रात्ययिकी क्रिया – नये अधिकरणों को उत्पन्न करने वाली क्रिया;

१४. समन्तानुपात क्रिया – स्त्री, पुरुष और पशुओं के आने, जाने, उठने एवं बैठने के स्थान में मल-मूत्र आदि का त्याग करने वाली क्रिया;

१५. अनाभोग क्रिया – प्रमार्जन और अवलोकन नहीं की गई भूमि पर शरीर आदि को रखने वाली क्रिया;

१६. स्वहस्त क्रिया – जो क्रिया दूसरों के द्वारा करने की हो, उसे स्वयं कर लेना;

१७. निसर्ग क्रिया – पाप आदान आदि रूप प्रवृत्ति विशेष के लिए सम्मति देना;

१८. विदारण क्रिया – दूसरे ने जो सावद्य कार्य किया है, उसे प्रकाशित करना;

१९. आज्ञाव्यापादिकी क्रिया – चारित्रमोहनीय कर्म के उदय से आवश्यक आदि के विषय में शास्त्रोक्त आज्ञा को न पाल सकने के कारण उसका अन्यथा निरूपण करना;

२०. अनाकाङ्क्षा क्रिया – धूर्तता और आलस्य के कारण शास्त्रों में उपदेशित विधि का अनादर करना;

२१. प्रारम्भ क्रिया – छेदना, भेदना और मारना आदि क्रिया में स्वयं तत्पर रहना और दूसरे के करने पर हर्षित होना;

२२. पारिग्राहिकी क्रिया – परिग्रह का विनाश नहीं हो, इसके लिए जो क्रिया की जाए;

२३. माया क्रिया – ज्ञान-दर्शन आदि के विषय में छल करना;

२४. मिथ्यादर्शन क्रिया – मिथ्यादर्शन के साधनों से युक्त पुरुष की प्रशंसा आदि के द्वारा दृढ़ करना कि वह ठीक कर रहा है।

२५. अप्रत्याख्यान क्रिया – संयम का घात करने वाले कर्म के उदय से त्याग रूप परिणामों का न होना।

उपर्युक्त क्रियाओं में सम्यक्त्व क्रिया उपादेय है, क्योंकि उससे सम्यक्त्व का विकास होता है, उसमें दृढ़ता आती है, पुण्य बन्ध होता है और वह परम्परा से

शुद्धोपयोग तक ले जाने वाली है। इसलिए ऐसा आस्रव पुण्यास्रव है, जो उपादेय है। शेष सभी क्रियायें पापास्रव के लिए कारण हैं।

इन पच्चीस क्रियाओं को पाँच-पाँच के समूह में विभाजित कर सङ्कलित किया गया है। पहली पाँच क्रियाएँ (१ से ५ तक) शुभ-अशुभ फल देने वाली स्मरणात्मक हैं। पाँच क्रियायें (६ से १० तक) कषाय की मुख्यता से होती हैं। अगली पाँच क्रियायें (११ से १५ तक) इन्द्रिय विषय और असावधानीपूर्वक क्रियाएँ करने से सम्बन्धित हैं। इसी प्रकार अन्य दो समूहों का भी पृथक् विषय है।

Comments : The reasons responsible for the influx of Sāmparāyika Āsrava to the living beings dwelling up to tenth stage of spiritual development have been described in this Sūtra. The objects of five sense organs, four passions, five kinds of vowlessness and twenty-five activities - in all thirty-nine are the subdivisions of influx of karmas. Sāmparāyika Āsrava is caused by the five objects of touch, taste, smell, sight and hearing sense organs; by four passions - anger, pride, deceitfulness and greed and five vowlessness - violence, untruth, theft, non-chastity and desire for possessions. Twenty-five activities are also causes for Sāmparāyika Āsrava are as follows -

1. Samyaktva Kriyā - It is the activity which strengthens the Right Faith such as worship of Jinendra Bhagavān, veneration of preceptors, study of scriptures etc.

2. Mithyātva Kriyā - It is that activity which tends to enhance perverted faith such as worship of false Gods, keeping faith in false preceptors, study of such scriptures which preach violence as cause of earning merit etc.

3. Prayoga Kriyā - It is the activity involving movement of body etc.

4. Samādāna Kriyā - It is the tendancy of an ascetic ignoring the vows after having accepted.

5. Īryāpatha Kriyā - It is the activity of walking carefully by looking ahead on the ground to protect living beings which may be trodden or injured.

6. Prādoṣikī Kriyā - It is an activity actuated by anger.

7. Kāyikī Kriyā - It is an activily of a wicked person motivated by evil thoughts.

8. Ādhikaraṇikī Kriyā - It is acceptance of weapons which cause injury or violence.

9. Pāritāpikī Kriyā - It is causing pain to the living beings.

10. Prāṇātipātikī Kriyā - It is injuring vitalities such as life, sense organs, power, respiration etc.

11. Darśana Kriyā - It is the wish of a person captivated by passions to see beautiful parts of the body.

12. Sparśana Kriyā - It is the wish of a person moved by passions to get pleasing touch sensations.

13. Prātyayikī Kriyā - It is an activity to invent new objects of enjoyment.

14. Samantānupāta Kriyā - It is leaving excrements in places frequented by men, women, animals etc.

15. Anābhoga Kriyā - It is laying the body etc. on the ground without proper inspection or cleaning etc.

16. Svahasta Kriyā - It is an activity performed by one's own hand what was to be done by others.

17. Nisarga Kriyā - It is to accord approval of injurious or sinful activities.

18. Vidāraṇa Kriyā - It is proclaiming sinful activities of others in public.

19. Ājñāvyāpādikī Kriyā - It is misinterpreting of the injunctions of the scriptural code owing to the rise of conduct deluding karma, when one is not able to practice the same as prescribed.

20. Anākāṅkṣā Kriyā - It is indifference to observe the injunctions laid down in the scriptures owing to dishonest intentions or laziness.

21. Prārambha Kriyā - It is indulgence in activities such as piercing, hewing, slaughtering and so on or taking delight when these are committed by others.

22. Pārigrāhikī Kriyā - It is an activity for safeguarding one's possessions.

23. Māyā Kriyā - It is deceitful activity with regard to knowledge, faith etc.

24. Mithyādarśana Kriyā - It is approving of another's wrong belief by praising his actions based on that.

25. Apratyākhyāna Kriyā - It is not having disposition of renouncement, owing to rise of karmas hindering restraint and discipline.

Out of the above activities, Samyaktva Kriyā is worth practising as it develops and strengthens the Right Faith, causes bondage of merit and leads eventually manifestation of passionless Right Conduct inclination i.e. Śuddhopayoga. Hence such an influx is a cause of merit, which is worthy of practising. Other remaining activities are cause of influx of demerit.

These twenty-five activities are clubbed in five groups. First five (from 1 to 5) activities are to be remembered for as these are causes of fruition of auspicious & inauspicious fruits. Next five activities (from 6 to 10) are mainly due to rise of passions. Next five activities (from 11 to 15) are related to the five sense organs' - objects and careless performance. Similarly the remaining two groups pertain to different contexts.

योग में विशेषता
Variety of Yoga Affecting Differentiation in Influx

तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभावाधिकरणवीर्यविशेषेभ्यस्तद्विशेषः।।६।।

(तीव्र-मन्द-ज्ञात-अज्ञात-भाव-अधिकरण-वीर्य-
विशेषेभ्यः तत्-विशेषः।)

**Tīvramandajñātājñātabhāvādhikaraṇavīrya-
viśeṣebhyastadviśeṣaḥ.(6)**

शब्दार्थ : **तीव्रमन्दज्ञाताज्ञातभाव** – तीव्र भाव, मन्द भाव, ज्ञात भाव, अज्ञात भाव; **अधिकरण** – आधार; **वीर्य** – सामर्थ्य या बल; **विशेषेभ्यस्तद्विशेषः** – विशेष से पूर्वोक्त अर्थात् साम्परायिक आस्रव के भेदों में विशेष यानी उनमें न्यूनाधिक तारतम्य (होता है)।

Meaning of Words : **Tīvramandajñātājñātabhāva** - intensity of desires or thought activity, mild thought activity, intentional act feelings & unintentional act feelings; **Adhikaraṇa** - substratum; **Vīrya** - potency or power to do an act; **Viśeṣebhyastadviśeṣaḥ.** - peculier potency of the kinds of influx of Sāmparāyika influx which vary every moment in varying degree from maximum to minimum & vice-varsa.

सूत्रार्थ : तीव्र भाव, मन्द भाव, ज्ञात भाव, अज्ञात भाव, अधिकरण विशेष और वीर्य विशेष के भेद से उस साम्परायिक आस्रव की विशेषता होती है।

English Rendering : Sāmparāyika influx is differentiated on the basis of intensity of thought activity, mildness of thought activity, intentional or unintentional nature of action, the kinds of substratum and potency which goes on varying every moment from maximum to minimum degrees & vice-varsa.

टीका : बाह्य एवं अभ्यन्तर निमित्तों की उदीरणा के प्राप्त होने पर आत्मा में जो आवेग भाव क्रोधादि कषायों की तीव्रता होने पर होते हैं, उन्हें तीव्र भाव कहते हैं। उन निमित्तों से आत्मा में जो मन्द भाव होते हैं, वे मन्द भाव कहलाते हैं। बुद्धिपूर्वक हुए भाव को ज्ञात भाव कहते हैं। बिना जाने, मद, प्रमाद या असावधानी से हुए भाव को अज्ञात भाव कहते हैं। जिसमें पदार्थ रखे जाते हैं, उसे अधिकरण कहते हैं। द्रव्य की स्वशक्ति विशेष को वीर्य कहते हैं।

क्रोध, राग, द्वेष, सज्जन या दुर्जन का संयोग और देश, काल आदि बाह्य कारणों के वश से किसी आत्मा में इन्द्रिय विषय, कषाय, अव्रत और क्रियाओं की प्रवृत्ति में तीव्र भाव होता है तो किसी में मन्द भाव होता है। अतः परिणाम के अनुसार ही तीव्र या मन्द आस्रव होता है। जानकर या बिना जाने प्रवृत्ति होने पर भी आस्रव में न्यूनाधिकता होती है। अधिकरण या आधार की विशेषता से भी आस्रव में विशेषता होती है। जैसे, वज्रर्षभनाराच संहनन वाले पुरुष को पाप कर्म में प्रवृत्त होने पर अधिक

आस्रव होगा और हीन संहनन वाले पुरुष को अल्प आस्रव होगा। इसी प्रकार देश-काल आदि के भेद से भी आस्रव में भेद होता है। इस प्रकार प्रत्येक समय, प्रत्येक जीव के भावों की तरतमता और बाह्य तथा अभ्यन्तर निमित्तों से आस्रव में विशेषता होती रहती है।

Comments : Owing to external and internal causes, intense feelings generated in the soul due to anger etc passions. are termed as 'Tīvra Bhāva'. When these causes result in mild feelings, they are termed as 'Manda Bhāva'. Feelings generated after due consideration are termed as 'Jñāta Bhāva'. Feelings originated without knowing or due to pride, carelessness or laziness are known as 'Ajñāta Bhāva'. The substratum is the base of a substance. It is known as 'Adhikaraṇa'. Inherent energy found in a substance is called potency or 'Vīrya'.

Owing to manifestation of anger, attachment, aversion, association of a gentle or wicked person, intense feeling of indulgence in sexual passions, vowlessness and such other activities occur in a person. Sometimes one gets mild feelings. As such the intense or mild influx results depending on one's feelings. Activities performed knowingly or unknowingly also result in varying degree of influx. Influx is also affected due to particular kind of substratum. For example, if a person having an osseous structure of body when indulges in sinful activities incures maximum demerit as compared to the one having weak body structure. Similarly influx varies according to area of occurence, nature of period etc. Thus the influx in varying degree occurs all the time depending upon the intensity of internal & external causes.

अधिकरण के भेद
Kinds of Substratum

अधिकरणं जीवाजीवाः ।।७।।

(अधिकरणं जीव-अजीवाः।)

Adhikaraṇaṁ Jīvājīvāḥ.(7)

शब्दार्थ : **अधिकरणम्** – आधार (आस्रव का); **जीवाजीवाः** – जीव और अजीव (द्रव्य हैं)।

Meaning of Words : **Adhikaraṇam** - substratum; **Jīvājīvāḥ** - souls & non-souls.

सूत्रार्थ : अधिकरण जीव और अजीव रूप हैं।

English Rendering : Sentient and insentient constitute the substratum (of influx).

टीका : जिस द्रव्य का आश्रय लेकर आस्रव उत्पन्न होते हैं, वह द्रव्य अधिकरण कहलाता है। आस्रव के लिए जीव और पुद्गल दोनों आवश्यक होते हैं। अकेला जीव या अकेला पुद्गल आस्रव उत्पन्न नहीं कर सकता। आस्रव जीव में ही होता है, लेकिन पुद्गल के बिना नहीं हो सकता।

Comments : Base substance for generation of influx is known as substratum. For influx, both sentient being and matter particles are essential. Neither the sentient being alone nor the matter particles alone can cause influx. Although the influx occurs in a living being but it can not take place in the absence of matter particles.

जीवाधिकरण के भेद
Kinds of Substratum of Soul

आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भयोगकृतकारितानुमतकषाय–
विशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः ।।८।।

(आद्यं संरम्भ-समारम्भ-आरम्भ-योग-कृत-कारित-
अनुमत-कषाय-विशेषैः त्रिः त्रिः त्रिः चतुः च एकशः।)

Ādyaṁ Saṁrambhasamārambhārambhayogakṛtakāritā-
numatakaṣāyaviśeṣaistristristriścatuścaikaśaḥ.(8)

शब्दार्थ : **आद्यम्** – पूर्व का (अर्थात् जीव अधिकरण का); **संरम्भसमारम्भारम्भ** – योजना बनाना, योजना पूर्ण करने के लिए आवश्यक सामग्री

जोड़ना और योजना का कार्य प्रारम्भ करना; **योग –** योग (मन, वचन और काय की क्रिया); **कृतकारितानुमत** – स्वयं करना, दूसरे से कार्य करवाना और दूसरे द्वारा किये हुए कार्य की अनुमोदना करना; **कषाय** – कषाय (क्रोध, मान, माया, लोभ); **विशेषैः** – विशेषों से; **त्रिस्त्रिस्त्रिश्चतुश्चैकशः** – (प्रत्येक के) तीन, तीन, तीन एवं चार क्रमशः (भेद हैं)।

Meaning of Words : **Ādyam** - of first **(**i.e. soul subsratum**)**; **Saṁrambhasamārambhārambha** - planning, collection of requisite materials for execution and to commence activity as planned; **Yoga** - Yoga **(**activity of mind, speech and body**)**; **Kṛtakāritānumata** - to do oneself, to get it done by others and to approve after performance of an act by others; **Kaṣāya** - passions **(**anger, pride, deceitfulness, greed**)**; **Viśeṣaiḥ** - that which distinguishes one from others; **Tristristriścatuścaikaśaḥ** - three, three, three and four kinds respectively.

सूत्रार्थ : संरम्भ–समारम्भ–आरम्भ, मन–वचन–काय, कृत–कारित–अनुमोदना, कषाय (क्रोध–मान–माया–लोभ) विशेष इनके क्रमशः तीन, तीन, तीन और चार भेद होते हैं। (इनके परस्पर गुणित करने से जीवाधिकरण के एक सौ आठ भेद होते हैं।)

English Rendering : The substratum of living beings consists of planning, collection of requisite materials for execution and commencement of the planned activity, Yoga **(**activity of mind, speech and body**)**, doing an act by oneself, getting it done through others and according approval after performance of an act by others and with passions i.e. anger, pride, deceitfulness & greed. Thus it is of three, three, three and four kinds respectively. **(**On multiplication of all these, the substratum of living beings works out to be of one hundred & eight kinds.**)**

टीका : संरम्भ, समारम्भ और आरम्भ; मन, वचन, काय; कृत, कारित, अनुमोदना; क्रोध, मान, माया और लोभ – इनको परस्पर में गुणित करने से जीवाधिकरण के एक सौ आठ भेद होते हैं। किसी कार्य को करने की योजना बनाना 'संरम्भ' है। उस कार्य को करने के लिए आवश्यक साधन एकत्रित करना 'समारम्भ'

है और उस कार्य को प्रारम्भ कर देना 'आरम्भ' है। स्वयं करना 'कृत', दूसरे से कराना 'कारित' और किसी दूसरे द्वारा कार्य को करने के बाद अनुमोदना करना 'अनुमति' या 'अनुमोदना' है।

सूत्र में 'च' शब्द से जीवाधिकरण के और भी कई भेद होते हैं, ऐसा अर्थ है। कषाय के चार भेद हैं – अनन्तानुबन्धी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन। जैसे इनकी तरतमता और अनुभागों में अन्तर होगा, उसी प्रकार से जीवाधिकरण के कारण आस्रव में अन्तर पड़ेगा।

Comments : Substratum of a living being is of one hundred & eight kinds consequent on multiplication together of planning activity, collection of requisite materials for execution, commencement of an activity, mental thinking, vocal activity, bodily activity, to do oneself, get it done by others and to approve of the activity done by others, with anger, pride, deceitfulness and greed. Planning to perform an activity is termed as 'Saṁrambha'. To collect requisite materials for performance of the planned activity is known as 'Samārambha' and to commence performance of the planned activity is 'Ārambha'. To perform one-self is known as 'Kṛta', to get it performed by others is known as 'Kārita' and to approve of an act after it is completed by others is termed as 'Anumati' or 'Anumodanā'.

The use of the word 'Ca' in the Sūtra means that there are several other kinds of substratum. Passions are classified into four kinds as 'Anantānubandhī', 'Apratyākhyāṇavaraṇa', 'Pratyākhyāṇavaraṇa' and 'Saṁjvalana'. As the intensity and potency of these vary, so would vary the influx.

अजीवाधिकरण के भेद
Kinds of Insentient Substratum

निर्वर्तनानिक्षेपसंयोगनिसर्गा द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः परम् ।।९।।

(निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गाः द्वि-चतुर्-द्वि-त्रिभेदाः परम्।)

Nirvartanānikṣepasaṁyoganisargā
Dvicaturdvitribhedāḥ Param.(9)

शब्दार्थ : **निर्वर्तना –** रचना या उत्पन्न करना; **निक्षेप –** रखना, धरना या स्थापना करना; **संयोग –** जोड़ना या मिलाना; **निसर्गाः** - प्रवर्तना; **द्विचतुर्द्वित्रिभेदाः –** (इनके क्रमशः) दो, चार, दो और तीन भेद (रूप); **परम् –** पर (दूसरा अधिकरण अर्थात् अजीवाधिकरण है)।

Meaning of Words : **Nirvartanā** - construction or production; **Nikṣepa** - installation; **Saṁyoga** - coincidence or meeting together; **Nisargāḥ** - activities; **Dvicaturdvitribhedāḥ** - **(**in that order**)** two, four, two and three kinds; **Param** - the other substratum **(**i.e. Ajīvādhikaraṇa**)**.

सूत्रार्थ : पर अर्थात् अजीवाधिकरण क्रम से दो, चार, दो और तीन भेद वाले निर्वर्तना, निक्षेप, संयोग और निसर्ग रूप है।

English Rendering : Insentient substratum consists of two, four, two and three kinds respectively in the form of production, installation, coincidence and activities.

टीका : दो निर्वर्तना, चार निक्षेप, दो संयोग और तीन निसर्ग के भेद से अजीवाधिकरण के कुल ग्यारह भेद हैं। रचना करने का काम 'निर्वर्तना' है। निर्वर्तना के दो भेद हैं – मूलगुण निर्वर्तना और उत्तरगुण निर्वर्तना। मूलगुण निर्वर्तना के पाँच भेद हैं – शरीर, वचन, मन, प्राण और अपान। इनकी रचना करना मूलगुण निर्वर्तना है। काष्ठ, पाषाण आदि से चित्र आदि बनाना, जीवों के खिलौने बनाना, लिखना आदि उत्तरगुण निर्वर्तना है।

किसी वस्तु को स्थापित करने को 'निक्षेप' कहते हैं। इसके चार भेद हैं – अप्रत्यवेक्षित, दुःप्रमृष्ट, सहसा और अनाभोग निक्षेपाधिकरण। बिना देखे किसी वस्तु को रख देना अप्रत्यवेक्षित निक्षेपाधिकरण है। ठीक तरह से भूमि का शोधन नहीं करके किसी वस्तु को रख देना दुःप्रमृष्ट निक्षेपाधिकरण है। शीघ्रतापूर्वक किसी वस्तु को रखना सहसा निक्षेपाधिकरण है। किसी वस्तु को बिना देखे अयोग्य स्थान में रखना अनाभोग निक्षेपाधिकरण है।

मिलाने का नाम 'संयोग' है। इसके दो भेद हैं – भक्तपान संयोगाधिकरण और उपकरण संयोगाधिकरण। किसी अन्नपान को दूसरे अन्नपान में मिलाना भक्तपान संयोगाधिकरण है और कमण्डलु आदि उपकरणों को दूसरे उपकरणों के साथ मिलाना उपकरण संयोगाधिकरण है।

प्रवृत्ति करने को 'निसर्ग' कहते हैं। इसके तीन भेद हैं - काय निसर्गाधिकरण, वचन निसर्गाधिकरण और मनो निसर्गाधिकरण।

Comments : Two kinds of production (Nirvartanā), four kinds of installation (Nikṣepa), two kinds of coincidence (Saṁyoga) and three kinds of activities (Nisarga) - are in all eleven kinds of substratum of insentient substances. To produce or construct is known as 'Nirvartanā'. It is of two kinds - substratum of primary attributes and of secondary attributes. Substratum of primary attributes is of five sub-kinds - body, speech, mind, inhalation and exhalation. To produce or construct these are substratum of primary attributes. Making pictures in wood, stone etc. and making toys of the living beings, writing etc. are substratum of secondary attributes.

To place or install a thing is known as installation or 'Nikṣepa'. It is of four kinds Apralyavekṣita, Duḥpramṛṣṭa, Sahasā & Anābhoga Nikṣepādhikarṇa. Placing things on the floor without seeing whether there are insects or not is Apratyavekṣita, placing things without proper cleaning of the floor is Duḥpramṛṣṭa, placing things quickly in a hurry is Sahasā and placing things anywhere without care and not in their proper places even when there is no hurry is Anābhoga.

Combining and mixing is known as coincidence i.e. Saṁyoga. It is of two kinds - 'Bhaktapāna Saṁyogādhikaraṇa i.e. mixing of food items, drinks etc. and 'Upakaraṇa Saṁyogādhikaraṇa' i.e. mixing instruments like Kamaṇḍalu etc. with other instruments.

To do an act is termed 'Nisarga'. It is of three kinds - activity through body i.e. Kāya Nisargādhikaraṇa, activity through speech i.e. Vacana Nisargādhikaraṇa and mental activity i.e. Manonisargādhikaraṇa.

ज्ञानावरण-दर्शनावरण आस्रव के कारण

Causes of Influx of Knowledge Deluding & Perception Deluding Karmas

तत्प्रदोषनिह्नवमात्सर्यान्तरायासादनोपघाता
ज्ञानदर्शनावरणयोः ।।१०।।

(तत् प्रदोष-निह्नव-मात्सर्य-अन्तराय-आसादन-उपघाताः ज्ञान-दर्शन-आवरणयोः।)

Tatpradoṣanihnavamātsaryāntarāyāsādanopaghātā Jñānadarśanāvaraṇayoḥ.(10)

शब्दार्थ : **तत्** – वह (ज्ञान-दर्शन के विषय में); **प्रदोष** – मोक्ष के लिये साधन-भूत तत्त्व-ज्ञान करनेवाले की प्रशंसा न की जावे और अन्तरङ्ग में दुष्टता का भाव हो; **निह्नव** – ज्ञान आदि का छिपाना; **मात्सर्य** – डाह करना या देने योग्य ज्ञान को न देना; **अन्तराय** – ज्ञान आदि की प्राप्ति में विघ्न डालना; **आसादन** – शरीर या वचनों से पर के द्वारा प्रकाश करने योग्य ज्ञान आदि को रोक देना; **उपघाताः** – प्रशस्त ज्ञान में दोष लगाना; **ज्ञान–दर्शन–आवरणयोः** – ज्ञानावरण (यदि ज्ञान के विषय में हो) और दर्शनावरण (यदि दर्शन के विषय में हो) कर्मों के आस्रव के कारण हैं।

Meaning of Words : **Tat** - in that (in case of knowledge & Perception); **Pradoṣa** - to deprecate the one who is learned in scriptures leading on the path of salvation and possesses spitful or malicious feelings; **Nihnava** - concealment of knowledge etc; **Mātsarya** - envy or refusal to impart appropriate knowledge due to jealousy; **Antarāya** - obstructing in imparting knowledge etc; **Āsādana** - to obstruct the true knowledge etc. proclaimed by others by body or speech; **Upaghātāḥ** - to find fault in the right kind of knowledge; **Jñāna-Darśana-Āvaraṇayoḥ** - are causes of influx of knowledge obscuring karmas or Perception obscuring karmas as the case be.

सूत्रार्थ : ज्ञान और दर्शन के विषय में प्रदोष, निह्नव, मात्सर्य, अन्तराय, आसादन और उपघात – ये ज्ञानावरण और दर्शनावरण कर्मों के लिए आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : In respect of knowledge and Perception, Pradoṣa, Nihnava, Mātsarya, Antarāya, Āsādana and Upaghāta are the causes for influx of knowledge obscuring and Perception obscuring karmas, as the case be.

टीका : सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्दर्शन–ज्ञानयुक्त पुरुष की प्रशंसा सुनकर स्वयं प्रशंसा न करना और मन में दुष्ट भावों का लाना 'प्रदोष' है। किसी बात को जानने पर भी 'मैं उस बात को नहीं जानता' या पुस्तक आदि के होने पर भी 'मेरे पास पुस्तक आदि नहीं हैं' इस प्रकार ज्ञान को छिपाना 'निह्नव' है। योग्य पात्र को

योग्य ज्ञान नहीं देना 'मात्सर्य' है। किसी के ज्ञान में विघ्न डालना 'अन्तराय' है। दूसरे के द्वारा प्रकाशित ज्ञान की काय और वचन से विनय, गुण, कीर्तन आदि नहीं करना अपितु निषेध करना 'आसादन' है। सम्यग्ज्ञान को भी मिथ्याज्ञान कहकर दूषण लगाना 'उपघात' है।

एक कारण के द्वारा अनेक कार्य भी होते हैं। अतः ज्ञान के विषय में किये गये प्रदोष आदि दर्शनावरण के भी कारण होते हैं। अथवा ज्ञान विषयक प्रदोष आदि ज्ञानावरण के और दर्शन विषयक प्रदोष आदि दर्शनावरण के आस्रव के लिये कारण होते हैं।

आचार्य और उपाध्याय के साथ शत्रुता रखना, अकाल में अध्ययन करना, अरुचिपूर्वक पढ़ना, पढ़ने में आलस्य करना, प्रवचन को अनादरपूर्वक सुनना, बहुश्रुत के सामने गर्व करना, मिथ्योपदेश, बहुश्रुत का अपमान, ख्याति-पूजा आदि की इच्छा से असम्बद्ध प्रलाप, सूत्र के विरुद्ध व्याख्यान, कपट से ज्ञान का ग्रहण करना, शास्त्र बेचना और प्राणातिपात आदि ज्ञानावरण कर्म के आस्रव के कारण हैं।

देव, गुरु आदि के दर्शन में मात्सर्य करना, दर्शन में अन्तराय करना, किसी के चक्षु को उखाड़ देना, इन्द्रियों का अभिमान करना, अपने नेत्रों का अहङ्कार, दीर्घ निद्रा, अति निद्रा, आलस्य, नास्तिकता, सम्यग्दृष्टियों को दोष देना, कुशास्त्रों की प्रशंसा करना, मुनियों से जुगुप्सा आदि करना और प्राणातिपात आदि दर्शनावरण कर्म के आस्रव के कारण हैं।

Comments : Not to be delighted about the grandeur of Right Faith and Right Knowledge and not to praise some one even after learning that he is a person endowed with Right Faith and Right Knowledge and keep spiteful thoughts in mind is 'Pradoṣa' i.e. spite. Even when one has knowledge about something but says - 'I do not know that' or 'I do not have that book' even when he is in possession of the book, is known as 'Nihnava', i.e. concealment of knowledge. Not to impart appropriate knowledge to a deserving condidate due to envy is 'Mātsarya' or envy. Acting as a stumbling block in acquisition of knowledge by others is 'Antarāya' or obstruction. To renounce by word or deed, the knowledge being preached by others and not to show any respect or veneration through body and speech is 'Āsādana'. Blaming true knowledge or calling it false is 'Upaghāta', i.e. disparagement.

Several deeds are possible by one cause. As such spiteful activity in respect of knowledge is also a cause for spiteful activity in respect of perception or spiteful act in respect of knowledge is also the cause for influx of perception deluding karma and that in respect of perception is for knowledge deluding karma.

The causes of influx of knowledge deluding karma are to keep enmity towards Ācāryas & Upādhyāyas, to study scriptures during inauspicious times, to study without due interest, to study lazily, listening, preachings without due respect, to be puffed with pride before learned ones, preaching untruth, insulting the learned ones, making irrelevent utturances for fame & worship of the self, to interpret a Sūtra, acquisition of knowledge through deceitful means, selling scriptures, hurting the life-vitalities etc.

The causes of influx for perception deluding karmas are to have envy while paying obeisance to Deva, Guru etc., to create obstructions in paying obeisance, removing eyes of some one, to be proud of one's own five senses and display arrogance about superior eyes, sleep for longer durations, frequent sleeping, laziness, to be an atheist, finding faults in Right Believers, praising ultra scriptures, to have hatred towards ascetics, hurting the life vitalities etc.

असातावेदनीय कर्म के आस्रव के कारण
Causes of Influx of Painful-feeling Karmas

दुःखशोकतापाक्रन्दनवधपरिदेवनान्यात्म–
परोभयस्थान्यसद्वेद्यस्य ।।११।।

(दुःख-शोक-ताप-आक्रन्दन-वध-परिदेवनानि
आत्म-पर-उभय-स्थानि-असद्वेद्यस्य।)

Duḥkhaśokatāpākrandanavadhaparidevanānyātma-
parobhayasthānyasadvedyasya.(11)

शब्दार्थ : **दुःख –** पीड़ारूप परिणाम; **शोक** – इष्ट या परोपकारी के वियोग से विकलता; **ताप –** बहुत पश्चाताप होना; **आक्रन्दन –** अश्रुपात सहित बहुत विलाप; **वध** – प्राणों को क्षति पहुँचाना; **परिदेवन –** करुणा पैदा करने के लिये रुदन के साथ गुणानुवाद या स्मरण करना; **आत्म–पर–उभय–स्थानि** – अपने में, दूसरे में या दोनों में स्थित होना; **असद्वेद्यस्य –** असातावेदनीय के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Duḥkha** - painful feelings; **Śoka** - sorrow; **Tāpa** - repentance or remorse; **Ākrandana** - weeping with tears; **Vadha** - depriving vitalities; **Paridevana** - pathetic moaning to attract compassion; **Ātma-para-ubhaya-sthāni** - to produce in oneself or another or both; **Asadvedyasya** - are causes of influx of pain-causing kārmic nature **(**Asātāvedanīya**)**.

सूत्रार्थ : स्व, पर तथा दोनों में किये जाने वाले दुःख, शोक, ताप, आक्रन्दन, वध और परिवेदन असाता वेदनीय के आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : Pain, sorrow, remorse, weeping with tears, deprivation or injury of vitalities, pathetic moaning to attract compassion in one-self, in others or in both are causes of influx of pain causing kārmic nature.

टीका : पीड़ा या वेदना रूप आत्मा के परिणाम को 'दुःख' कहते हैं। उपकार करने वाली चेतन या अचेतन वस्तु के नष्ट हो जाने की विकलता होना 'शोक' है। निन्दा से, मानभङ्ग से, कर्कश वचन से या अपवाद आदि से मन के खिन्न होने वाले तीव्र सन्ताप को 'ताप' कहते हैं। परिताप के कारण अश्रुपातपूर्वक, बहुविलाप आदि के साथ रोना 'आक्रन्दन' है। आयु, इन्द्रिय आदि दस प्रकार के प्राणों का वियोग करना 'वध' है। स्व और परोपकार की इच्छा से संक्लेश परिणामपूर्वक इस प्रकार रोना कि सुनने वाले के हृदय में दया उत्पन्न हो जाए, 'परिदेवन' है।

यद्यपि ये सभी दुःख के भेद-प्रभेद हैं, लेकिन यहाँ दुःख के अनेक प्रकारों का बोध कराने के उद्देश्य से कुछ पर्यायों का उल्लेख हुआ है।

यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि अन्तरङ्ग में क्रोध आदि के आवेशपूर्वक जो दुःखादि होते हैं वे असातावेदनीय के आस्रव के कारण हैं। अतः मोह क्षय के लिये कारणभूत उपवास, केशलुञ्चन आदि समतापूर्वक किए जाएँ तो वे असातावेदनीय के

कारण नहीं हैं, किन्तु उन्हें यदि क्रोधादिपूर्वक किया जाए तो असातावेदनीय का आस्रव होगा।

Comments : To experience suffering in one's soul is the feeling of pain. The feeling of sadness at the loss or separation of desirable sentient or insentient one is sorrow. Extreme feeling of disgrace caused by criticism, hurt, harsh acquisitions or blame is remorse or agony. Moaning is weeping loudly out of anguish. Injury is depriving some one of his life, the senses, strength or vigour and respiration. Lamentation is the loud out-cry (wailing) of an afflicted person by recalling the achievements of the departed and giving expression to these in order to evoke sympathy in others and secure help to one-self and others.

Although all the above are divisions and sub-divisions of sufferings, yet some of these are indicated here to describe some of their modes.

It is necessary here to understand that sufferings caused by internal passions such as anger etc. alone lead to the influx of karmas which cause unpleasant feelings. As such if keeping fasts, plucking of one's hairs of head, face etc. are undertaken with equanimity for destruction of delusion, the same are not the cause for influx of karmas for unpleasant feelings; but if such activities are undertaken with passionate feelings of anger etc., the same will be the cause for influx of karmas for unpleasant feelings.

सातावेदनीय कर्म के आस्रव के कारण
Causes of Influx of Pleasure-feeling Karmas

भूतव्रत्यनुकम्पादानसरागसंयमादियोगः
क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ।।१२।।

(भूत-व्रति-अनुकम्पा-दान-सरागसंयम-आदि-योगः
क्षान्तिः शौचम् इति सद्वेद्यस्य।)

Bhūtavratyanukampādānasarāgasaṁyamādiyogaḥ
Kṣāntiḥ Śaucamiti Sadvedyasya.(12)

शब्दार्थ : **भूतव्रत्यनुकम्पादान** – प्राणियों और व्रतियों के प्रति अनुकम्पा तथा दान देना; **सरागसंयमादियोगः** – सरागसंयम आदि का योग (क्रियाएँ); **क्षान्तिः** – क्षान्ति; **शौचम् इति** – लोभ का त्याग और ऐसी अन्य क्रियाएँ; **सद्वेद्यस्य** – साता वेदनीय कर्म के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Bhūtavratyanukampādāna** - to have compassion and offer charity for all living beings and to those with vows; **Sarāgasaṁyamādiyogaḥ** - activities in self-restraint with slight attachment, partial vowers etc.; **Kṣāntiḥ** - equanimity; **Śaucam Iti** - free from greed i.e. contentment & such similar activities; **Sadvedyasya** - **(**are causes of influx of**)** pleasure-feeling karmas.

सूत्रार्थ : भूतों (प्राणियों), व्रतियों पर अनुकम्पा और दान, सरागसंयम आदि का योग, क्षान्ति और शौच – ये साता वेदनीय के आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : To have a compassion and to offer to all living beings including the vowers, restraint activities with slight attachment etc., equanimity, freedom from greed i.e. contentment etc. are the causes of influx of pleasure feeling karmas.

टीका : जो आयु कर्मोदय के कारण विविध गतियों में होते हैं, वे 'भूत' कहलाते हैं। 'भूत' यानी प्राणी। अनुग्रह से दयार्द्र चित्तवाले के दूसरे की पीड़ा को अपनी ही मानने का जो भाव होता है, वह 'अनुकम्पा' है। अर्थात् चारों गतियों के प्राणियों के प्रति दयाभाव होना भूत-अनुकम्पा है। अणुव्रत और महाव्रत के धारी श्रावक और मुनियों पर अनुकम्पा का होना 'व्रति-अनुकम्पा' है। 'दूसरे का उपकार हो' इस बुद्धि से अपनी वस्तु का अर्पण करना 'दान' है। छह काय के जीवों की हिंसा न करना और पाँच इन्द्रियों और मन को वश में रखना 'संयम' है। राग सहित संयम को 'सराग संयम' कहते हैं। मन को एकाग्र करना या उस दिशा में मन को लगाना योग है। क्रोध, मान एवं माया की निवृत्ति 'क्षान्ति' है। सब प्रकार के लोभ का त्याग 'शौच' है।

सूत्र में 'आदि' शब्द से संयमासंयम, अकाम निर्जरा, बाल तप और 'इति' शब्द प्रकारवाची है, अतः उससे अर्हत्पूजा, बाल, वृद्ध एवं तपस्वियों की वैयावृत्य आदि का ग्रहण होता है।

Comments : 'Bhūta' means living beings who are born in different life courses owing to rise of karmas. Fellow feelings for or distress at the sufferings of others as if these were one's own is 'Anukampā' or compassion. Or to have compassion for all living beings in all four life-courses is 'Bhūta Anukampā'. Compassion towards those who practise Partial Vows and Great Vows i.e. house-holders and ascetics is termed as 'Vratyanukampā'. Bestowing gifts on others with a motive to benefit them is known as 'Dāna' or charity. Not to hurt or harm any living being of all the six kinds and to have control or restraint on five sense organs and mind is 'Saṁyama'. 'Saṁyama' with attachment is known as 'Sarāga Saṁyama'. Concentration of mind is Yoga or application of mind in that direction is Yoga. 'Kṣānti' i.e. equanimity is the renunciation of anger, pride & deceitfulness passions. Renunciation of all kinds of greed passion is known as 'Śauca'.

The use of world 'Ādi', in the Sūtra is to include practice of 'Saṁyamāsaṁyama', involuntary dissociation of karmas and penance with perversion and the use of word 'Iti' is to indicate worship of omniscient and rendering service to the young and old ones who are engaged in performance of penance etc.

दर्शनमोहनीय कर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of Faith Deluding Karma

केवलिश्रुतसङ्घधर्मदेवावर्णवादो दर्शनमोहस्य ।।१३।।

(केवलि-श्रुत-सङ्घ-धर्म-देव-अवर्णवादः दर्शनमोहस्य।)

Kevaliśrutasaṅghadharmadevāvarṇavādo Darśanamohasya.(13)

शब्दार्थ : **केवलिश्रुतसङ्घधर्मदेवावर्णवादः** – केवली अवर्णवाद, श्रुत अवर्णवाद, सङ्घ अवर्णवाद, धर्म अवर्णवाद और देव अवर्णवाद; **दर्शनमोहस्य** – दर्शनमोहनीय (कर्म) के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Kevaliśrutasaṅghadharma-devāvarṇavādaḥ** - attributing faults to the omniscients, the scriptures, the congregation of ascetics, the true religion and the celestial beings; **Darśanamohasya** - **(**are causes of influx**)** of Perception deluding **(**karmas**)**.

सूत्रार्थ : केवली, श्रुत, सङ्घ, धर्म और देवों का अवर्णवाद दर्शन मोहनीय कर्म के आस्रव का कारण है।

English Rendering : Attributing faults to the omniscients, the scriptures, the congregation of ascetics, the true religion and the celestial beings are the causes of influx of Faith deluding karmas.

टीका : जिनका ज्ञान आवरण रहित है, वे 'केवली' कहलाते हैं। अतिशय बुद्धि वाले गणधर देव उनके उपदेश का स्मरण कर जो ग्रन्थों की रचना करते हैं, वह 'श्रुत' कहलाता है। रत्नत्रय से युक्त श्रमणों का समुदाय 'सङ्घ' कहलाता है। सर्वज्ञ द्वारा प्रतिपादित आगम में उपदिष्ट अहिंसा ही 'धर्म' है। चार निकाय के देव – भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिष्क और विमानवासी होते हैं। गुणवाले महापुरुषों में जो दोष नहीं हैं, उनमें उनका उद्भावन करना 'अवर्णवाद' है। इन केवली आदि के विषय में किया गया अवर्णवाद दर्शनमोहनीय के आस्रव का कारण है। यथा – केवली कवलाहार से जीते हैं, इत्यादि रूप से कथन करना केवली का अवर्णवाद है। शास्त्र में मांस भक्षण आदि को निर्दोष कहा है, ऐसा कथन श्रुत का अवर्णवाद है। ये शूद्र हैं, अशुचि हैं इत्यादि रूप से अपवाद करना सङ्घ का अवर्णवाद है। जिनेन्द्रदेव के द्वारा उपदिष्ट धर्म में कोई सार नहीं है, जो इसका पालन करते हैं, वे असुर होंगे, इस प्रकार का कथन धर्म का अवर्णवाद है। सुरा और मांस आदि का देव सेवन करते हैं, इस प्रकार का कथन करना देवों का अवर्णवाद है।

Comments : The souls completely free from the knowledge obscuring karmas are the omniscients. Scriptures **(**Śruta**)** are composed based on their teachings by the chief disciples of Tīrthaṅkaras namely the Gaṇadharas who are endowed with extremely miraculous knowledge. The congregation of ascetics endowed with three jewels **(**Ratnatraya**)** is called 'Saṅgha'. Non-

violence only based on the preachings in the scriptures as propagated by the omniscients is called religion or 'Dharma'. The four orders of celestial beings namely residential, peripatetic, stellar and heavenly beings are 'Devas'. Attributing faults to, which are non-existant or slandering the Great Ones described above is 'Avarṇavāda'. To say that according to scriptures meat-eating is without any infirmity is 'Avarṇavāda of scriptures'. To slander the ascetics by calling them low caste, filthy etc. is 'Avarṇavāda of Saṅgha'. The propagation that religion preached by Lord Jinendra is devoid of merit and those who follow it will be reborn as demons is 'Avarṇavāda of Dharma'. To state that celestial beings eat meat and drink wine etc. is 'Avarṇavāda of Devas'.

चारित्रमोहनीय कर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of Conduct Deluding Karma

कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ।।१४।।

(कषाय-उदयात् तीव्र-परिणामः चारित्रमोहस्य।)

Kaṣāyodayāttīvrapariṇāmaścāritramohasya.(14)

शब्दार्थ : **कषायोदयात् –** कषायों के उद्रेक होने से; **तीव्रपरिणामः –** उग्र भाव (होना); **चारित्रमोहस्य –** चारित्रमोहनीय (कर्म) का (आस्रव का कारण है)।

Meaning of Words : **Kaṣāyodayāt** - **(**manifestation of intense feelings**)** as a result of rise of passions; **Tīvrapariṇāmaḥ** - intense feelings; **Cāritramohasya** - **(**is the cause of influx**)** of conduct deluding **(**karma**)**.

सूत्रार्थ : कषाय के उदय से होने वाला तीव्र आत्मपरिणाम चारित्रमोहनीय कर्म के आस्रव का कारण है।

English Rendering : Intense feelings manifested due to rise of passions are the cause of influx of conduct deluding karmas.

टीका : आत्मा में होने वाली क्रोध आदि रूप कलुषिता को 'कषाय' कहते हैं। क्रोध, मान, माया, लोभ रूप चार कषायें हैं। ईषत् यानी अल्प कषाय को 'अकषाय' या 'नो-कषाय' कहते हैं। द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव और भाव के अनुरूप कर्मों के फल का प्राप्त होना 'उदय' कहलाता है।

चारित्रमोहनीय के दो भेद हैं - कषायमोहनीय और अकषायमोहनीय। स्वयं और दूसरे में कषाय उत्पन्न करने, व्रत और शीलयुक्त तपस्वियों के चारित्र में दूषण लगाना, धर्म का नाश करना, धर्म में विघ्न उत्पन्न करना, देशसंयतों से गुण और शिक्षाव्रत का त्याग कराना, मात्सर्य आदि से रहित जीवों में विभ्रम उत्पन्न करना, आर्त्त और रौद्र परिणामों के जनक वेष, व्रत आदि का धारण करना कषायमोहनीय कर्म के आस्रव के कारण हैं।

अकषायमोहनीय के नौ भेद हैं - हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद। समीचीन धर्म के पालन करने वाले का उपहास करना, दीनजनों को देखकर हँसना, कन्दर्पपूर्वक हँसना, बहुत प्रलाप करना, हास्यरूप स्वभाव होना आदि हास्य के आस्रव के कारण हैं। नाना प्रकार की क्रीड़ा करना, व्रत-शील आदि में अरुचि होना आदि 'रति' के कारण हैं। दूसरों में अरति पैदा करना और रति का विनाश करना, पापशीलजनों का संसर्ग, पाप क्रियाओं को प्रोत्साहन देना आदि अरति के आस्रव के कारण हैं। स्वयं में और दूसरे में शोक उत्पन्न करना, शोकयुक्तजनों का अभिनन्दन आदि 'शोक' के आस्रव के कारण हैं। स्वयं एवं दूसरों में भय उत्पन्न करना, निर्दयता, दूसरों को त्रास देना आदि भय के आस्रव के कारण हैं। पुण्य क्रियाओं एवं आचारों में जुगुप्सा करना, दूसरों की निन्दा करना आदि जुगुप्सा के आस्रव के कारण हैं। पर-स्त्री सेवन, स्त्रीरूप को धारण करना, असत्य वचन, पर-वञ्चना, दूसरे के दोषों को देखना आदि स्त्रीवेद के आस्रव के कारण हैं। अल्प क्रोध, माया का अभाव, स्त्रियों में अल्प आसक्ति, ईर्ष्या का न होना, राग वस्तुओं में अनादर, स्वदार सन्तोष, पर-स्त्री का त्याग आदि 'पुरुषवेद' के आस्रव के कारण हैं। प्रचुर कषाय, गुप्तेन्द्रियों का विनाश, पर-स्त्रियों का अपमान, स्त्री और पुरुषों में अनङ्ग क्रीड़ा करना, व्रती और शीलवान् पुरुषों को कष्ट देना, तीव्र राग आदि 'नपुंसकवेद' के आस्रव के कारण हैं।

Comments : The passionate feelings in the soul arising owing to passions i.e. anger etc. are known as 'Kaṣāya' or passions. Passions are of four kinds - anger, pride, deceitfulness and greed.

Quasi-passions are called 'Akaṣāya' or 'No-Kaṣāya'. Fruition of karmas depending on Dravya (substance), Kṣetra (area), Kāla (period), Bhava (life-course) and Bhāva (disposition) is called 'Udaya'.

Conduct deluding karmas are of two kinds - with passions and with quasi-passions. One's own being actuated by passions and to actuate passion in others, blaming the conduct of ascetics practising vows & secondary vows, destroying the religious activities, inducing Partial Vowers to give up secondary vows of education and enhancement vows, creating confusion among those who are free from envy, putting on such dresses and accepting such vows, which intensify painful & wicked concentrations, are causes of influx of passional - feeling karmas.

Quasi-passions are of nine kinds - Hāsya (laughter), Rati (passionate attachment), Arati (hatred or non-attachment), Śoka (sorrow), Bhaya (fear), Jugupsā (disgust), Strīveda (sexual inclination for a man), Puruṣaveda (sexual inclination for a woman) and Napuṁsakaveda (sexual inclination for both man & woman). Rediculing those who practice righteous religion, laughing at those in distress or misery, laughing with sexual inclinations, excessive prattle & laughter cause the influx of laughter, desire for strange pleasures, disrelish for vows & secondary vows are causes for influx of passionate attachment. Promoting dissatisfaction in others, destroying the pleasures of others, association with the wicked and promoting sinful activities etc. are causes for influx of passionate non-attachment. Bewailing oneself, plunging others into sorrow, rejoicing at others' lamentations etc. are causes for influx of fear. Disgust at noble deeds and virtuous conduct, criticising others etc. are causes for influx of disgust. Having sexual relations with other woman, putting woman-like look, speaking untruth, prying into others' faults or infirmities etc. are causes for influx of Strīveda. Slight anger, free from deceitfulness, very mild attraction for females, free from jealousy, disrespect, for those things which induce

attachment, contentment with one's wife and renunciation of other females etc. are causes for male-sex-inclination. Great or intense passions, causing injury to the private parts, assaulting other women, indulging in unnatural sexual activities, troubling those who practice vows & secondary vows, intense attachment etc. are causes for 'Napuṁsakaveda'.

नरक आयु कर्म के आस्रव के कारण
Causes of Influx of Hellish-age Determining Karma

बह्वारम्भपरिग्रहत्वं नारकस्यायुषः ।।१५।।

(बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्य आयुषः।)

Bahvārambhaparigrahatvaṁ Nārakasyāyuṣaḥ.(15)

शब्दार्थ : **बह्वारम्भपरिग्रहत्वम्** – बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रहपना; **नारकस्य** – नारक की; **आयुषः** – आयु की (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Bahvārambhaparigrahatvam** - too much wordly activities and too much attachment to wordly objects; **Nārakasya** - of hellish being; **Āyuṣaḥ** - **(**are cause of influx of**)** age determining karma.

सूत्रार्थ : बहुत आरम्भ और बहुत परिग्रह का भाव नारक आयु की आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : Too much wordly activities **(**inflicting of pain & suffering**)** and too much attachment to mundane objects are causes of influx of age determining karma as hellish beings.

टीका : प्राणियों को दुःख पहुँचाने वाली प्रवृत्ति करना 'आरम्भ' है। वस्तु के स्वामित्व रूप सङ्कल्प को रखना 'परिग्रह' है। हिंसा आदि क्रूर कार्यों में निरन्तर प्रवृत्ति, दूसरे के धन का अपहरण, इन्द्रियों के विषयों में अत्यन्त आसक्ति तथा मरते समय कृष्ण लेश्या और रौद्रध्यान आदि परिणाम भी नरक आयु के आस्रव के कारण हैं।

Comments : 'Ārambha' is an activity which causes pain and suffering to living beings, 'Parigraha' is attachment to objects, namely thinking 'This is mine', perpetual cruel activity such as

killing, appropriating others' wealth, excessive attachment to worldly objects and wicked concentration at the time of death arising from Kruṣṇa Lesyā i.e. black thought colouration (passion tainted throught activity) etc. cause the influx of life determining karma leading to birth in infernal regions.

तिर्यञ्च आयु कर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of Tiryañca-age Determining Karma

माया तैर्यग्योनस्य ।।१६।।

(माया तैर्यग्-योनस्य।)

Māyā Tairyagyonasya.(16)

शब्दार्थ : **माया –** मायाचारी; **तैर्यग्योनस्य –** तिर्यञ्च योनि के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Māyā** - deceitfulness; **Tiryagyonasya** - (are causes of influx of) age determining karma of Tiryañcas.

सूत्रार्थ : मायाचारी तिर्यञ्च योनि सम्बन्धी आयु के आस्रव का कारण है।

English Rendering : Deceitfulness is the cause of influx of age determining karma leading to Tiryañcas (animal & vegetable world).

टीका : माया यानी छल–कपट करना तिर्यञ्च आयु के आस्रव का कारण है। चारित्रमोहनीय कर्म के उदय से आत्मा में होने वाले कुटिल परिणामों को 'माया' कहते हैं। इसके अतिरिक्त भी धर्मोपदेश में मिथ्या बातों को मिलाकर उनका प्रचार करना, शील रहित जीवन बिताना, मरण के समय नील व कापोत लेश्या और आर्त्तध्यान का होना आदि अशुभ परिणाम होने से तिर्यञ्च आयु के आस्रव का कारण होता है।

Comments : Deceitful disposition i.e. cheating causes the influx of life determing karma which leads to birth in the animal & vegetable world. Deceitful dispositions in the soul owing to rise of conduct deluding karma is termed as 'Māyā'. In addition, propagation of wrong things through preachings, lack of good conduct &

propriety, blue and grey passion tainted thoughts and painful concentration at the time of death are causes for influx of life karma leading to birth as Tiryañcas.

मनुष्य आयु कर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of Human-age Determining Karma

अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ।।१७।।

(अल्प-आरम्भ-परिग्रहत्वं मानुषस्य ।)

Alpārambhaparigrahatvaṁ Mānuṣasya.(17)

शब्दार्थ : **अल्पारम्भपरिग्रहत्वम् –** अल्प आरम्भ और अल्प परिग्रहपना; **मानुषस्य –** मनुष्य आयु के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Alpārambhaparigrahatvam** - a few mundane activities and a little mundane attachment to the worldly objects; **Mānuṣasya** - **(**are causes of the influx of**)** age determining **(**karma**)** as human beings.

सूत्रार्थ : अल्प आरम्भ और अल्प परिग्रह मनुष्य आयु के आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : A few mundane activities and a little mundane attachment to the worldly objects are the causes for influx of age determining karma as human-beings.

टीका : अल्प आरम्भ और अल्प परिग्रहपना सन्तोषपूर्वक जीवनयापन का मापदण्ड है। इनके अतिरिक्त भी स्वभाव का विनम्र होना, भद्र प्रकृति का होना, सरल व्यवहार करना, अल्प कषाय का होना तथा मरण के समय संक्लेशरूप परिणति का नहीं होना आदि भावों से भी मनुष्य आयु का आस्रव होता है।

Comments : The measure of leading a contented life is to have lesser involvement in wordly activities and keeping minimum possessions. Beside these, excellent behaviour, humility, mild or slight passions, death free from distressful disposition etc. are causes for influx of life determining karma to be born as human-being.

मनुष्य आयु कर्म के आस्रव के अन्य कारण
Other Causes for Influx of Human-age Determining Karma

स्वभावमार्दवं च ।।१८।।

(स्वभाव-मार्दवं च।)

Svabhāvamārdavaṁ Ca.(18)

शब्दार्थ : **स्वभावमार्दवम्** – स्वभाव में मृदुता होना; **च** – भी (मनुष्य आयु के आस्रव का कारण है)।

Meaning of Words : **Svabhāvamārdavam** - to have gentle nature; **Ca** - also **(**is cause for influx of age determining karma as human-being**)**.

सूत्रार्थ : स्वभाव की मृदुता भी मनुष्य आयु के आस्रव का कारण है।

English Rendering : Mild or gentle nature is also the cause of influx of the age determining karma as human being.

टीका : उपदेश की अपेक्षा के बिना होने वाले परिणामों की कोमलता रूप 'स्वभाव-मार्दव' है। सूत्र में दिया गया 'च' शब्द समुच्चय अर्थ में है। इस कारण मनुष्य सम्बन्धी आयु के आस्रव एवं अन्य हेतुओं का भी समुच्चय हो जाता है। अर्थात् स्वभाव की मृदुता से मनुष्य और देव दोनों आयुओं का आस्रव होता है।

Comments : To have mild dispositions without teaching or instructions is natural mildness or 'Svabhāva Mārdava' The use of the word 'Ca' in the Sūtra is to indicate connectivity. As such it connects influx for life determining karma as human being with other causes also. It means that the natural mild dispositon is the cause for influx of life determining karma to be born as human-being and also as celestial being **(**which is being described in the next Sūtra**)**.

चारों आयु कर्मों के आस्रव के कारण
Causes for Influx of All four age - Determining Karmas

निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ।।१९।।

(निःशील-व्रतत्वं च सर्वेषाम् ।)

Niḥśīlavratatvaṁ Ca Sarveṣām.(19)

शब्दार्थ : **निःशीलव्रतत्वम् –** शील और व्रतपना रहित; **च सर्वेषाम् –** सभी (आयु कर्मों) के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Niḥśīlavratatvam** - non-observance of supplementary and principal vows; **Ca Sarveṣām** - **(**is cause of influx**)** of age determining karmas of all beings **(**in all four life-courses**)**.

सूत्रार्थ : शील रहित और व्रत रहित होना सब आयु कर्मों के आस्रव के कारण हैं ।

English Rendering : Non-observance of supplementary and principal vows etc. is the cause of influx of age determining karma of all **(**four**)** life-courses.

टीका : तीन गुणव्रत और चार शिक्षाव्रत को 'शील' कहते हैं। अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह – ये पाँच 'व्रत' हैं। शील और व्रत से जो रहित हैं, उन्हें 'निःशीलव्रत' कहते हैं। निःशीलव्रत के भाव को 'निःशीलव्रतत्वम्' कहते हैं। शील और व्रत रहित भोगभूमिज जीव ऐशान स्वर्ग तक उत्पन्न होते हैं। अतः उक्त जीवों की अपेक्षा 'निःशीलव्रतत्व' देवायु के आस्रव का कारण है। कोई अल्प-आरम्भी और अल्प-परिग्रही व्यक्ति भी अन्य पापों की अपेक्षा नरक आयु को प्राप्त करते हैं। अतः ऐसे जीव भी अल्प आरम्भ और अल्प परिग्रहपना होने पर भी नारक आयु के आस्रव के कारण हैं।

Comments : Three 'Guṇavratas' **(**i.e. vows enhancing virtues**)** and four 'Śikṣā Vratas' **(**i.e. educational vows**)** together are termed as 'Śila'. Non-violence, truth, non-theft, celibacy and non-possessiveness are five 'Vratas' **(**i.e. vows**)**. Non-observance of 'Śilas' and vows is known as 'Niḥśīlavrata'. The disposition of Niḥśīlvrata is 'Niḥśīlavratatvam'. Pleasure-land beings who do not observe 'Śilas' and 'Vratas' take their next birth up to Eśāna heaven. It is in this context that 'Niḥśīlavratatva' is stated as a cause of influx of life determining karma for next birth as celestial beings. Someone having lesser involvement in activities and slight possessiveness may bind life determining karma to be born in hell due to other sinful indulgences. Therefore, such living beings,

inspite of having lesser involvement in activity and less possessiveness do incur the influx of life determing karma to be born in hell.

देव आयु कर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of Celestial-age Determining Karma

सरागसंयमसंयमासंयमाऽकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ।।२०।।

(सरागसंयम-संयमासंयम-अकामनिर्जरा-बालतपांसि दैवस्य।)

Sarāgasaṁyamasaṁyamāsaṁyamā(a)kāmanirjarā-bālatapāṁsi Daivasya.(20)

शब्दार्थ : **सरागसंयम –** सरागसंयम; **संयमासंयम –** संयमासंयम; **अकामनिर्जरा –** अकाम निर्जरा; **बालतपांसि –** बालतप; **दैवस्य –** देवायु के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Sarāgasaṁyama** - restraint with attachment **(**found in monks in sixth stage of spiritual development**)**; **Saṁyamāsaṁyama** - restraint cum non-restraint **(**found in house-holders in fifth stage of spiritual development**)**; **Akāmanirjarā** - involuntary dissociation of karmas; **Bālatapāṁsi** - restraint accompanied with perverted faith; **Daivasya** - influx of age determining karma of the life-course as a celestial being.

सूत्रार्थ : सरागसंयम, संयमासंयम, अकामनिर्जरा और बाल तप – ये देवायु के आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : Restraint with attachment of monks in sixth stage of spiritual development, restraint-cum-non-restraint of house-holders in the fifth stage of spiritual development, involuntary dissociation of karmas and restraint accompanied by perverted faith are causes of influx for age determining karma of the life-course as a celestial being.

टीका : राग सहित व्यक्ति का संयम, जो संसार के कारणों का विनाश करने में तत्पर हो लेकिन अभी जिसकी सम्पूर्ण अभिलाषायें नष्ट नहीं हुई हों, ऐसा व्यक्ति 'सराग' कहलाता है और सरागी का जो संयम है, वह 'सराग संयम' है। अथवा जो

संयम राग सहित हो, वह 'सराग संयम' है। ऐसा संयम महाव्रतधारी मुनियों को होता है। व्रती श्रावक, क्षुल्लक, क्षुल्लिका, ऐलक, आर्यिका, आदि को 'संयमासंयम' होता है। बिना संकल्प के जो व्यक्ति संक्लेश को सहन करता है, उसके 'अकाम निर्जरा' होती है। जैसे बुभुक्षा, प्यास, ब्रह्मचर्य, भूशयन, मलधारण, परिताप आदि के कष्टों को सहन करने वाले जेल में बन्द प्राणी के जो अल्प निर्जरा होती है, वह 'अकाम निर्जरा' है। मिथ्यादृष्टि तापस, संन्यासी आदि का जो तप है, वह 'बाल तप' है। ये सब देवायु के बन्ध के कारण हैं।

Comments : The one with attachment yet effortful to put an end to worldly existence but has not given up his desires, is called 'Sarāga' and restraint conduct of such a person is called 'Sarāga Saṁyama'. Or the restraint conduct accompanied with attachment is known as 'Sarāga Saṁyama'. Such a conduct is possessed by the monks observing Great Vows. House-hold-vowers, Kṣullakas, Kṣullikās, Elakas, Āryikās, etc. observe 'Saṁyamāsaṁyama'. Those who endure sufferings without any resolve, earn involuntary dissociation of karmas i.e. Akāma Nirjarā. For example to endure hunger, thirst, celibacy, sleeping on floor, dirt, distress etc. like the one in prison, do earn a little dissociation of karmas, which is known as 'Akāma Nirjarā'. Observance of austerities by a person of perverted faith is called 'Bāla Tapa'. These cause the influx of karmas leading to celestial birth.

देव आयु कर्म के आस्रव के अन्य कारण

Other Causes for Influx of age Determining Karma of Heavenly Beings'

सम्यक्त्वं च ।।२१।।

Samyaktvaṁ Ca.(21)

शब्दार्थ : **सम्यक्त्वम्** – सम्यग्दर्शन; **च** – भी (देवायु के आस्रव का कारण है)।

Meaning of Words : **Samyaktvam** - Right Faith; **Ca** - also **(**is a cause of influx of life-course of celestial being**)**.

सूत्रार्थ : सम्यक्त्व भी देवायु के आस्रव का कारण है।

English Rendering : Right Faith is also a cause for influx of age determining karma of life-course as a celestial being.

टीका : पूर्व के सूत्र की टीका में उल्लेख किया है कि सम्यक्त्व रहित व्रतों का पालन देवायु के आस्रव के कारण है। इस सूत्र में सम्यक्त्व सहित व्रत भी देवायु के आस्रव में कारण है, का उल्लेख है। यहाँ यह बतलाना उचित प्रतीत होता है कि बद्धायुष्क को छोड़कर सम्यग्दृष्टि केवल वैमानिक देवों की आयु का आस्रव करता है। यह नियम भी केवल मनुष्य और तिर्यञ्च पर्यायों पर ही लागू होता है, क्योंकि देव और नरक आयु का बन्ध केवल मनुष्य और तिर्यञ्च ही करते हैं। वैसे सम्यग्दृष्टि जीव चारों गतियों में पाये जाते हैं। लेकिन देव और नारकी पुनः उन-उन गतियों में जन्म नहीं लेते।

Comments : In the commentary of the previous Sūtra, it is stated that observance of vows without Right Faith is the cause for influx of life-course as a celestial being. In this Sūtra, it is stated that practice of vows with Right Faith is also a cause for influx of life-course as a celestial being. It appears that the purpose here is to state that except when the age determining bondage has taken place prior to attainment of Right Faith, a Right Believer always earns influx of life-course as heavenly beings. This rule is applicable only for human beings and Tiryañcas because celestial beings and hellish beings bond only the life courses of human beings & Tiryañcas. Although Right Believers exist in all the four life-courses but celestial beings & hellish beings are not reborn in their same life-courses.

अशुभ नामकर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of Inauspicious Physique-making Karma

योगवक्रता विसंवादनं चाशुभस्य नाम्नः ।।२२।।

(योग-वक्रता विसंवादनं च अशुभस्य नाम्नः।)

Yogavakratā Visaṁvādanaṁ Cāśubhasya Nāmnaḥ.(22)

शब्दार्थ : **योगवक्रता –** योगों की वक्रता; **विसंवादनम् –** विसंवादन; **च –** और (अन्य भी); **अशुभस्य नाम्नः –** अशुभ नामकर्म के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Yogavakratā** - crooked activities of mind, speech and body; **Visaṁvādanam** - wrangling; **Ca** - and (other causes also); **Aśubhasya Nāmnaḥ** - (is cause of influx of) inauspicious Nāmakarma.

सूत्रार्थ : योगों की वक्रता और विसंवाद तथा अन्य भी ये अशुभ नामकर्म के आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : Crooked activities of mind, speech and body and wrangling and some others also cause influx of inauspicious Nāmakarma i.e. physique making karma.

टीका : मन में कुछ अन्य सोचना, वचन से कुछ दूसरे प्रकार का कहना और काय से भिन्न रूप से ही प्रवृत्ति करना योग की वक्रता है। दूसरों की अन्यथा प्रवृत्ति कराना अथवा श्रेयोमार्ग पर चलने वालों को उस मार्ग की निन्दा करके बुरे मार्ग पर चलने को कहना 'विसंवाद' है । जैसे – सम्यक् चारित्र आदि क्रियाओं में प्रवृत्ति करने वाले से कहना कि तुम ऐसा मत करो या ऐसा करो।

योग वक्रता आत्मगत होती है और विसंवाद परगत होता है। यह ही दोनों में भेद है। सूत्रगत 'च' से योगवक्रता और विसंवादन के अतिरिक्त भी अशुभ नामकर्म के आस्रव के अन्य कारण भी हैं । जैसे – मिथ्यादर्शन, अस्थिर चित्तता, झूठे बाँट-माप आदि रखना, झूठी साक्षी देना, पर-निन्दा, आत्म-प्रशंसा, परद्रव्य ग्रहण, असत्य भाषण, अधिक परिग्रह की मूर्च्छा आदि।

Comments : Thinking something else, speaking differently from that and to acting or working in an altogether different way is crookedness of activity (i.e. Yoga Vakratā). To make others act contrarily by criticising the right path followers and to induce them to follow the wrong path is known as 'Visaṁvāda'. For example, to ask the one following the right conduct etc. not to act that way but to do the other way i.e. false way.

Crookedness pertains to one's inner-self whereas deception relates others (i.e. misleading others). This is the only difference

between the two. The use of the word 'Ca' in the Sūtra is to include other causes other than crookedness & deception for influx of inauspicious Nāmakarma. For example, wrong belief, fickleness of mind, to keep false weights & measures, to give false affidavit, criticising others, praising self, grabbing others' wealth, wrong preaching, hankering for more possessions etc.

शुभ नामकर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of Auspicious Physique-making Karma

तद्विपरीतं शुभस्य ।।२३।।

(तत् विपरीतं शुभस्य।)

Tadviparītaṁ Śubhasya.(23)

शब्दार्थ : **तद्विपरीतम् –** उस (अशुभ नामकर्म के आस्रवों के कारणों) से विपरीत; **शुभस्य –** शुभ नामकर्म के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Tadviparītam** - opposite of that **(**the causes for influx of inauspicious Nāmakarma**)**; **Śubhasya** - **(**are causes of influx**)** of auspicious Nāmakarma.

सूत्रार्थ : उससे विपरीत (अशुभ नामकर्म के विपरीत) यानी योगों की सरलता और अविसंवाद – ये शुभ नामकर्म के आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : The opposite of these **(**i.e. opposite causes of influx of inauspicious Nāmakarma**)**, i.e. the straight forward activity of mind, speech & body and honesty or candour are causes for influx of auspicious Nāmakarma.

टीका : योगों की सरलता और अविसंवाद – ये शुभ नामकर्म के आस्रव के कारण हैं। शुभ नामकर्म के आस्रव के और भी कारण हैं जो पूर्व सूत्र के 'च' से समुच्चय होते हैं। जैसे – धार्मिक पुरुषों एवं स्थानों का दर्शन करना, आदर–सत्कार करना, सद्भाव रखना, उपनयन, संसार से डरना और प्रमाद का त्याग आदि।

Comments : Simplicity or straight forwardness in Yoga i.e. activities of mind, speech and body and non-crookedness are the causes for influx of auspicious Nāmakarma. There are other causes

also for influx of auspicious Nāmakarma which are indicated by the use of word 'Ca' in the previous Sūtra. For example, to visit and pay reverence to the virtuous and religious places, to honour them, to keep requisite relations with all, not to discriminate, putting on sacred thread, fear from wordly transmigration, avoidance of negligence etc.

तीर्थङ्कर नामकर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of Tīrthaṅkara Nāmakarma

दर्शनविशुद्धिर्विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोग–संवेगौ शक्तितस्त्यागतपसी साधुसमाधिर्वैयावृत्त्यकरणमर्हदाचार्य–बहुश्रुतप्रवचनभक्तिरावश्यकापरिहाणिर्मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ।।२४।।

(दर्शनविशुद्धिः विनयसम्पन्नता शीलव्रतेषु-अनतीचारः अभीक्ष्ण-ज्ञानोपयोग-संवेगौ शक्तितः-त्याग-तपसी साधुसमाधिः वैयावृत्त्यकरणं अर्हद्-आचार्य-बहुश्रुत-प्रवचनभक्तिः आवश्यक-अपरिहाणिः मार्गप्रभावना प्रवचनवत्सलत्वं इति तीर्थकरत्वस्य।)

Darśanaviśuddhirvinayasampannatā Śīlavrateṣvanatī-cāro(a)bhikṣṇajñānopayogasaṁvegau Śaktitastyāgatapasī Sādhusamādhirvaiyāvṛttyakaraṇamarhadācārya-bahuśrutapravacanabhaktirāvaśyakāparihāṇirmārgaprabhāvanā Pravacanavatsalatvamiti Tīrthakaratvasya.(24)

शब्दार्थ : **दर्शनविशुद्धिः विनयसम्पन्नता शीलव्रतेष्वनतीचारः –** दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शील और व्रतों में अनतीचारता; **अभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ –** अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग एवं अभीक्ष्ण संवेग; **शक्तितस्त्यागतपसी –** शक्ति के अनुसार त्याग तथा शक्ति के अनुसार तप; **साधुसमाधिः वैयावृत्त्यकरणम्–** साधु समाधि, वैयावृत्त्यकरण; **अर्हदाचार्यबहुश्रुतप्रवचनभक्तिः –** अर्हद् भक्ति, आचार्य भक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचन भक्ति; **आवश्यकापरिहाणिः –** आवश्यकों का परिहार नहीं करना; **मार्गप्रभावना –** मार्ग प्रभावना; **प्रवचनवत्सलत्वम् इति तीर्थकरत्वस्य –** प्रवचन वत्सलत्व - ये तीर्थङ्कर प्रकृति के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Darśanaviśuddhiḥ Vinayasampannatā Śīlavrateṣvanatīcāraḥ** - purity of Right Faith, reverence, observance of vows and supplementary vows without transgression; **Abhīkṣṇajñānopayogasaṁvegau** - ceaseless persuit of knowledge and perpetual fear of the cycle of mundane wandering; **Śaktitastyāgatapasī** - offering gifts according to one's capacity and practising austerities according to one's capacity; **Sādhusamādhiḥ Vaiyāvṛttyakaraṇam** - removal of obstacles that threaten the equanimity of ascetics, serving the meritorious by warding off evils & sufferings; **Arhadācāryabahuśrutapravacanabhaktiḥ** - devotion to omniscients, head preceptors, teacher preceptors and scriptures; **Āvaśyakāparihāṇiḥ** - practice of (six) essentials daily without any laxity; **Mārgaprabhāvanā** - propagation of teachings of the omniscient; **Pravacanavatsalatvam Iti Tīrthakaratvasya** - fervent affection for one's religious fellow beings, are causes of the influx of Tīrthaṅkara Nāmakarma.

सूत्रार्थ : दर्शनविशुद्धि, विनयसम्पन्नता, शील और व्रतों का निरतीचार पालन करना, अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग और अभीक्ष्ण संवेग, यथाशक्ति त्याग और यथाशक्ति तप, साधुसमाधि, वैयावृत्त्यकरण, अर्हद् भक्ति, आचार्य भक्ति, बहुश्रुत भक्ति, प्रवचन भक्ति, आवश्यकों के पालन में परिहार नहीं करना, मार्ग प्रभावना और प्रवचन वत्सलता – ये तीर्थङ्कर प्रकृति रूप नामकर्म के आस्रव के लिये सोलह कारण हैं।

English Rendering : Influx of Tīrthaṅkara Nāmakarma is caused by the following sixteen observances :

Purity of Right Faith, reverence, observance of vows & supplementary vows without transgression, ceaseless persuit of knowledge, perpetual fear of cycle of mundane wandering, offering gifts according to one's capacity & practising austerities according to one's capacity, removal of obstacles that threaten the equanimity of ascetics, serving the meritorious by warding off evil & sufferings, devotion to omniscients, head preceptors, teacher-preceptors, and scriptures, practising (six) essentials daily, propagation of the teachings of the omniscient and fervent affection for one's religious fellow beings.

टीका : **१. दर्शन विशुद्धि –** जिन भगवान् अर्हन्त परमेष्ठी द्वारा कहे गये निर्ग्रन्थ स्वरूप मोक्षमार्ग पर रुचि रखना दर्शन विशुद्धि है। दर्शन विशुद्धि निर्मल सम्यग्दर्शन को ही कहा है। इसके आठ अङ्ग हैं – १. निःशङ्कितत्व; २. निःकाङ्क्षितत्व; ३. निर्विचिकित्सितत्व; ४. अमूढ़दृष्टिता; ५. उपबृंहणता (उपगूहन); ६. स्थितीकरण; ७. वात्सल्य और ८. प्रभावना। निर्मल सम्यग्दर्शन पच्चीस दोषों से रहित होने को कहा गया है। ये पच्चीस दोष हैं – शङ्का आदि आठ दोष (१. शङ्का; २. काङ्क्षा; ३. विचिकित्सा ४. मूढ़दृष्टि; ५. अनुपबृंहणता (अनुपगूहन); ६. अस्थितीकरण; ७. अवात्सल्य; ८. अप्रभावना;); आठ मद (१. ज्ञान मद; २. ऐश्वर्य मद; ३. आज्ञा मद; ४. कुल मद; ५. बल मद; ६. तप मद; ७. रूप मद; ८. जाति मद); छह अनायतन (१. कुगुरु; २. कुदेव; ३. कुधर्म; ४-६. कुगुरु, कुदेव एवं कुशास्त्रों को मानने वाले) और तीन मूढ़ता (१. देव मूढ़ता; २. गुरु मूढ़ता; ३. धर्म मूढ़ता)। दर्शनविशुद्धि को इस सूत्र में पृथक् कहा गया है। क्योंकि जिन भक्तिरूप या तत्त्वार्थ श्रद्धा रूप सम्यग्दर्शन अकेला भी तीर्थङ्कर प्रकृति के बन्ध का कारण होता है।

२. विनयसम्पन्नता – सम्यग्ज्ञान आदि में और ज्ञानधारियों में आदर-सत्कार करना तथा मान आदि की निवृत्ति करना 'विनयसम्पन्नता' है।

३. शीलव्रतेष्वनतीचार – अहिंसा आदि व्रत हैं और इनके पालन करने के लिए क्रोध आदि का त्याग करना शील है। शील और व्रतों में निरतीचार प्रवृत्ति होना 'शीलव्रतेष्वनतीचार' है।

४. अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग – ज्ञान भावना में जीव आदि पदार्थ रूप स्वतत्त्व के सम्बन्ध में नित्य तत्पर रहना 'अभीक्ष्ण ज्ञानोपयोग' है।

५. अभीक्ष्ण संवेग – संसार के दुःखों से नित्य भयभीत रहना 'अभीक्ष्ण संवेग' है।

६. शक्तितस्त्याग – अपनी शक्ति के अनुसार पर के कल्याण के लिये यथाविधि औषध, आहार, अभय एवं ज्ञान दान देना 'शक्तितः त्याग' है।

७. शक्तितस्तप – अपनी शक्ति को न छिपाकर मार्ग अविरोधी कायक्लेश आदि करना 'शक्तितः तप' है।

८. साधु समाधि – व्रत एवं शील पालक मुनिगणों के तप के पालन करते समय उपस्थित होने वाले विघ्नों को साधारण या शान्त करना 'साधु समाधि' है।

९. वैयावृत्यकरण – गुणवानों पर दुःख आने पर निर्दोष विधि से उसको दूर करना 'वैयावृत्यकरण' है।

१०. अर्हद् भक्ति – केवलज्ञान रूपी दिव्य नेत्र के धारी अर्हन्त में भाव विशुद्धियुक्त जो अनुराग है, वह 'अर्हद् भक्ति' है।

११. आचार्य भक्ति – आचार्य में भाव विशुद्धियुक्त जो अनुराग है, वह 'आचार्य भक्ति' है।

१२. बहुश्रुत भक्ति – उपाध्याय में भाव विशुद्धियुक्त जो अनुराग है, वह 'बहुश्रुत भक्ति' है।

१३. प्रवचन भक्ति – जिनवाणी में भाव–विशुद्धिपूर्वक अनुराग करना 'प्रवचन भक्ति' है।

१४. आवश्यकापरिहाणि – छह आवश्यक क्रियाओं का यथाकाल उत्साहपूर्वक करना 'आवश्यक अपरिहाणि' है।

१५. मार्ग प्रभावना – ज्ञान, तप, दान एवं जिन–पूजा विधि आदि के द्वारा धर्म का प्रकाश करना 'मार्ग प्रभावना' है।

१६. प्रवचन वत्सलत्व – बछड़े में गाय के समान धार्मिकजनों में स्नेह रखना 'प्रवचन वत्सलत्व' है।

ये सब सोलह मिलकर तीर्थङ्कर प्रकृति के आस्रव के कारण हैं। यदि अलग–अलग इनका भली प्रकार चिन्तन किया जाता है अथवा समुदाय रूप सबका भली प्रकार चिन्तन किया जाता है तो भी तीर्थङ्कर नामकर्म के आस्रव के कारण होते हैं।

तीर्थङ्कर प्रकृति का बन्ध चौथे अविरतसम्यग्दृष्टि गुणस्थान से लेकर आठवें अपूर्वकरण गुणस्थान के छटवें भाग तक होता है। इसे केवल कर्मभूमिज मनुष्य ही प्रायः केवली या श्रुतकेवली के पादमूल में प्रारम्भ करते हैं। किन्तु उसका निष्पादन तिर्यञ्च गति को छोड़कर बाकी तीनों गतियों के जीव कर सकते हैं। तीर्थङ्कर प्रकृति का उदय तेरहवें गुणस्थान में होता है।

Comments : **1. Purity of Faith** i.e. Darśana Viśuddhi- Faith in the path of liberation characterized by the detachment preached by omniscient is purity of faith i.e. Darśana Viśuddhi. 'Darśana Viśuddhi' Right Faith is spot-less, free from all blemishes. It is characterized by eight qualities - 1. Freedom from doubt (Niḥśaṅkitatva); 2. Freedom from worldly desires (Niḥkāṅkṣitatva); 3. Freedom from revulsion (Nirvicikitsitatva); 4. Freedom from

superstitions (Amūḍadṛṣṭitā); 5. An act of safeguarding other's fault and development of one's spiritual capacity (Upabṛhaṇatā) (Upagūhana); 6. Ensuring steadiness of Right Faith & Conduct in others who are prone to swerve from the path (Sthitīkaraṇa); 7. Joy and affection towards the Right Path and those following the path (Vātsalya) and 8. Propagation of the true path (Prabhāvanā). Purity in Right Faith is attained when the faith is free from twenty-five kinds of infirmities. Eight types of infirmities of doubt etc. (1. Doubt; 2. Mundane desires; 3. Revulsion; 4. Superstitions; 5. Proclaiming others' faults; 6. Unstability in the path of liberation; 7. Non-affection for fellow beings on the Right Faith; 8. Non-propagation of the true path); eight kinds of prides (i.e. 1. pride of knowledge; 2. pride of prosperity 3. pride of authority; 4. pride of family; 5. pride of one's energy; 6. pride of penance; 7. pride of beauty and 8. pride of caste); six Anāyatanas (Non-receptacles) (i.e. 1. false preceptors; 2. false deities; 3. false religion and 4. followers of false preceptors, 5. followers of false deities and 6. followers of wrong religion) and three types of ignorances - ignorance about virtues of deities, preceptors and religion. Separate mention of purity in Right Faith is stated here as Right Faith in the form of reverence in omniscient or faith in the nature of Realities, is alone a cause for bondage of Tīrthaṅkara Nāmakarma.

2. Reverence i.e. Vinaya Sampannatā is homage to the three jewels which lead to liberation and those who are endowed with the Right Faith and renouncing pride etc.

3. Faultless observance of vows & supplementary vows (Śīlavrateṣvanaticāra) is observance of vows of non-violence etc. by giving up passions of anger etc.

4. Incessant cultivation of knowledge i.e. Abhīkṣṇa Jñānopayoga of the soul is constant contemplation of knowledge about one's own soul's identity and existence amongst other substances.

5. Perpetual fear of transmigration (Abhīkṣṇa Saṁvega) or cycle of existence.

6. Charity according to one's capacity (Śāktitastyāga) is to offer medicines, pure food, dispelling fear and imparting knowledge with a view to bestow benefit on others.

7. Observance of austerities according to one's capacity (i.e. Śaktitastapa) is voluntary affliction of the body in conformity of the scriptures.

8. Removal of obstacles in the due conduct of ascetics (i.e. Sādhu Samādhi) is to attempt to remove or minimise all impediments in practices of vows and performance of essentials by the ascetics.

9. Service to the religious ones (i.e. Vaiyāvṛttyakaraṇa) is to ward off imminent sufferings of those who are practising vows etc. by resorting to due methods.

10. Devotion to Omniscient (i.e. Arhadbhakti).

11. Devotion to Chief preceptor (i.e. Acāryabhakti).

12. Devotion to Teacher-preceptor (i.e. Bahuśrutabhakti).

13. Devotion to scriptures as composed on the basis of the preachings of omniscient (i.e. Pravacana Bhakti).

14. Incessant practice of six Essentials (Āvasyakāparihaṇi) at proper time in the prescribed manner.

15. Propagation of teachings of Omniscient (i.e. Mārga Prabhāvanā) by means of knowledge, austerities, worship of Jina etc.

16. Affection for fellow beings (Pravacana Vatsalatva) is to keep love and affection for one's brothern similar to the tender love of the cow for her calf.

All the above sixteen are causes for influx of Tīrthaṅkara Nāmakarma. Proper observance of these severally as well as together are the causes for the influx of Tīrthaṅkara Nāmakarma.

The bondage of Tīrthaṅkara Nāmakarma is earned by the Right Believers dwelling from fourth stage to the sixth part of eighth stage of spiritual development, i.e. from the stage of vow-

lessness to Apūrvakaraṇa stage. Normally the bondage of Tīrthaṅkarā Namakarma is commenced in the close proximity of an Omniscient or a scriptural omniscient by the person dwelling in action-land but it is completed in all life-courses except the Tiryañca life-course. The rise of Tīrthaṅkara Nāmakarma takes place only in thirteenth stage of spiritual develepment.

नीच गोत्र कर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of Low Family Status Determining Karma

परात्मनिन्दाप्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ।।२५।।

(पर-आत्म-निन्दा-प्रशंसे सद्-असद्-गुण-उच्छादन-उद्भावने च नीचैः-गोत्रस्य।)

Parātmanindāpraśaṁse Sadasadguṇocchādanodbhāvane Ca Nīcairgotrasya.(25)

शब्दार्थ : **परात्मनिन्दाप्रशंसे** – पर की निन्दा और अपनी प्रशंसा; **सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च** – विद्यमान और अविद्यमान गुणों का (क्रमशः) उच्छादन और उद्भावन; **नीचैर्गोत्रस्य** – नीच गोत्र के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Parātmanindāpraśaṁse** - speaking ill of others and praising one-self; **Sadasadguṇocchādanod-bhāvane Ca** - concealing good qualities of others and proclaiming in oneself those qualities which one does not possess; **Nīcairgotrasya** - (are causes of influx) of low family status determining karma.

सूत्रार्थ : दूसरों की निन्दा, अपनी प्रशंसा, दूसरे के विद्यमान गुणों को ढाँकना तथा अपने अविद्यमान गुणों को प्रकट करना – ये नीच गोत्र के आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : Censuring others, praising one-self, concealing good qualities present in others and proclaiming in

one-self those qualities which one does not possess, are causes of influx of low-family status determining karma.

टीका : सच्चे या झूठे दोष को प्रकट करने की इच्छा 'निन्दा' है। दूसरों की निन्दा 'पर-निन्दा' है। गुणों के प्रकट करने का भाव 'प्रशंसा' है। अपनी प्रशंसा 'आत्म-प्रशंसा' है। रोकने वाले कारणों के रहने पर प्रकट नहीं करने की वृत्ति होना 'उच्छादन' है। और रोकने वाले कारणों का अभाव होने पर प्रकट करने की वृत्ति होना 'उद्भावन' है। नीच गोत्र के आस्रव के कारणों के हेतुरूप 'च' का भी सूत्र में उल्लेख है। ऐसे कुछ अन्य भी कारण हैं - आठ प्रकार के मद, दूसरों का अपमान करना, गुरुओं को उचित आदर-सत्कार एवं विनय नहीं करना आदि।

Comments : The intention to disclose the defects in others whether true or false is censure (i.e. Nindā). Censure of others is termed as 'Paranindā'. Inclination of proclaiming virtues is praise i.e. Praśaṁsā. Praise of oneself is 'Ātmapraśaṁsā'. The non-manifestation of a thing when there is obstruction is concealment i.e. 'Ucchādana' and manifestation of a thing in the absence of obstructions is proclaimation i.e. 'Udbhāvana'. For some other causes for influx of low family status karma, the word 'Ca' is stated in the Sūtra. Some such other causes are - eight kinds of pride, insulting others, not to pay due respect & reverence to preceptors etc.

उच्च गोत्र कर्म के आस्रव के कारण
Causes for Influx of High Family Status Determining Karma

तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ।।२६।।

(तत् विपर्ययः नीचैः-वृत्ति-अनुत्सेकौ च-उत्तरस्य।)

Tadviparyayo Nīcairvṛttyanutsekau Cottarasya.(26)

शब्दार्थ : **तद्विपर्ययः** - उस (नीच गोत्र के आस्रव के कारणों) से विपरीत; **नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ** - विनयपूर्वक वृत्ति होना एवं उद्दण्ड स्वभाव नहीं होना; **चोत्तरस्य** - उच्च गोत्र के (आस्रव के कारण हैं)।

Meaning of Words : **Tadviparyayaḥ** - opposite of those (the causes for influx of low-family status determining karma);

Nīcairvṛttyanutsekau - humility and modesty; **Cottarasya** - **(**influx of**)** high-family-status determining karma.

सूत्रार्थ : नीच गोत्र के आस्रव के कारणों से विपरीत कारण, गुणीजनों के प्रति विनयपूर्वक नम्रभाव तथा शालीनतापूर्वक व्यवहार करना – ये सब उच्च गोत्र के आस्रव के कारण हैं।

English Rendering : The opposites of those cause influx of low-family-status determining karma, humility and modesty are the causes for high-family-status determining karma.

टीका : पर-प्रशंसा, आत्म-निन्दा, दूसरों के विद्यमान सद्गुणों को प्रकट करना, दूसरों के असद्गुणों को ढाँकना, गुणीजनों के प्रति नम्र वृत्ति और ज्ञान, तप आदि में श्रेष्ठ होकर मद न करना उच्च गोत्र के आस्रव के कारण हैं। सूत्रगत 'च' से गुरुओं का तिरस्कार न करना, उनके गुणों का वर्णन करना और मृदु भाषण आदि भी उच्च गोत्र के आस्रव के कारण हैं।

Comments : Praising virtues of others, censuring of oneself, proclaiming good qualities present in others and concealing their infirmities or non-virtues, bowing before the virtuous with veneration and not to show proud even when one is excellent in knowledge and observance of austerities are causes for influx of high status family determining karma. The use of word 'Ca' in the Sūtra is indicative that not to indulge in dis-respect of preceptors, proclaiming their virtues and sweet speaking etc. are also causes for influx of high status family determining karma.

अन्तराय कर्म के आस्रव के कारण
Causes of Influx of Obstructive Karma

विघ्नकरणमन्तरायस्य ।।२७।।

(विघ्न-करणं अन्तरायस्य।)

Vighnakaraṇamantarāyasya.(27)

शब्दार्थ : **विघ्नकरणम् –** विघ्न (के कारण उपस्थित) करना; **अन्तरायस्य –** अन्तराय कर्म के (आस्रव का कारण है)।

Meaning of Words : **Vighnakaraṇam** - causing obstacles; **Antarāyasya** - **(**are cause of influx of**)** obstructive karma.

सूत्रार्थ : विघ्न उपस्थित करना अन्तराय कर्म के आस्रव का कारण है।

English Rendering : Putting of obstacles is the cause of influx of the obstructive karma.

टीका : किसी के दान, लाभ, भोग, उपभोग और वीर्य में विघ्न उपस्थित करना अन्तराय कर्म के आस्रव का कारण है।

अन्तराय कर्म के आस्रव के अन्य कारण भी हैं – देवता के लिये निवेदित या अनिवेदित द्रव्य का ग्रहण करना, ज्ञान का निषेध एवं धर्म का व्यच्छेद करना, तपस्वी, गुरु तथा चैत्य की पूजा में व्याघात करना, कान, नाक, ओंठ आदि काटना तथा प्राणियों का वध करना, ज्ञान का प्रतिषेध तथा किसी के सत्कार में विघ्न डालना, दान, लाभ आदि और स्नान अनुलेपन, गन्ध, माल्य, आच्छादन, विभूषण, शयन, आसन, भक्ष्य, भोज्य, पेय, लेह्य और परिभोग आदि में विघ्न करना, किसी के वैभव और समृद्धि में विस्मय करना तथा द्रव्य का त्याग नहीं करना, दीक्षित, कृपण, दीन, अनाथ आदि को दिये जाने वाले वस्त्र, पात्र, आश्रय आदि में विघ्न करना।

Comments : Laying or causing obstacles to, in giving away the charity, in gain of others, to enjoyment of consumables and to enjoyment of non-consumables and in one's energy are causes for influx of obstructive karma.

Other causes for influx of obstructive karma are - acceptance or acquisition of the offerings and non-offerings meant for worship of deity; denial of right knowledge and uprooting, smashing or harming religious acts; creation of obstruction in veneration of those who are engaged in worship of ascetics, preceptors and omniscients; cutting or piercing ears, nose, lips etc. and killing living beings; rejection of right knowledge and creation of obstruction

in felicitation of others; creation of obstructions in one's charity, gain etc. and in bath, use of fragrance, flower decoration, dress, ornamentations, sleep, seat, eatables, food, drinks, licking and non-consumables etc.; to get astonishment in others' wealth or prosperity and not to renounce one's possessions; to create obstruction in offering to those who are initiated ones, miserly, poor, destitutes etc.

इति तत्त्वार्थसूत्रे षष्ठोऽध्यायः।

End of Sixth Chapter of Tattvārthasūtra.